सिलसिला (कहानी संकलन) : चन्द्रप्रभ

सौजन्य :
श्रीमती (स्व०) सुन्दर बाई कन्हैयालाल रांका
मद्रास

प्रकाशक :
श्री जितयशाश्री फाउंडेशन,
९-सी, एस्प्लानेड रो ईस्ट,
कलकत्ता-७०० ०६९

प्रकाशन-वर्ष : १९९२

मूल्य : दस रुपये

मुद्रक :
भारत प्रिण्टर्स (प्रेस)
जालोरी गेट, जोधपुर.

अनुक्रम

सिलसिला

रात काफी गहरा गई थी। यही कोई दूसरा पहर वीतने को था। आकाश में लाखों सितारों के बीच चन्द्रमा रोशनी की रिमझिम-रिमझिम वरसात बिखेर रहा था, पर चाँदनी उसे कैसे भिगो पाएगी, जो डाक वंगले के किसी बन्द कमरे में सोया हो। फिर उसकी आँखें भी बन्द थीं, मदिर-मदिर मादक नींद जो आ रही थी।

ये डाक-वंगला शहर से २० किलोमीटर पर बना हुआ था। आजू-वाजू में कोई गाँव न था। कहीं-कहीं कोई झुग्गी-झोपड़ी जरूर थी। डाक वंगला सड़क से कुछ हटकर था। चौराहे से वहाँ पग-पाँव पहुँचने में बा-मुश्किल दो मिनट लगते थे। रास्ता पहाड़ी था, इसलिए रात के समय किसी गाड़ी को उस रास्ते से गुजरना सख्त मना था।

डाक बंगले के कमरे नम्बर तीन में मुसाफिर चैन से सो रहा था। मेज पर चिमनी जल रही थी। शायद आज डाक वंगले की लाइट गोल हो। चिमनी के पास ही चार-पाँच अखबार पड़े थे जो बड़ी तरतीब से एक पर एक सजे हुए थे। अखबारों पर ही डायरी और बालपैन टेढ़े रखे पड़े थे।

पहाड़ी इलाकों में हवाएँ बयार-सी ठण्डी बहा करती हैं। शायद यही कारण है कि मुसाफिर पत्रिका पढ़ते-पढ़ते ही झपकी ले बैठा। इसीलिए तो उसकी छाती पर पत्रिका औंधी पड़ी थी। पत्रिका के पन्ने घुंघराले वालों की तरह बिखरे से, खुले-मुड़े-से थे। वह मुसाफिर चाहे जो हो, पर एक बात पक्की है कि वह पढ़ाकू पक्का था। वैसे उसने डाक बंगले के चौकीदार को अपना परिचय देते हुए स्वयं को राजधानी के किसी अखबार का संवाददाता वताया।

पौं-पौं-पौं—........!

आवाज ने पत्रकार की नींद तोड़ दी। आखिर वह जानता था कि मुसाफिरी में और उसमें भी जंगल में आदमी को कितना चौकन्ना रहना चाहिए। हल्की सी आहट को भी खतरे का संकेत मानना चाहिए। 'पौं-पौं' की आवाज ने उसे जगा दिया और वह हड़वड़ाकर अपने ही बिस्तर पर उठ वैठा। उसने आवाज को बारीकी से सुनना चाहा। उसे लगा जैसे यह आवाज सड़क की ओर से आ रही है। तो क्या कोई गाड़ी इधर से गुजर रही है। मगर गाड़ी तो इतनी रात गये यहाँ चल ही नहीं सकती। रात को यहाँ वाहन चलाना निषिद्ध है। तत्काल उसकी आँखों में 'नमक का दरोगा' घटना-क्रम उभर आया। क्या कोई नमक की गाड़ियाँ इधर से गुजर रही है? नहीं-नहीं, पौं-पौं तो केवल एक ही गाड़ी की लग रही है। फिर इतने से नमक के लिए इतना वड़ा खतरा कौन मोल लेगा।

अरे! कहीं यह कोई तस्करी साजिश तो नहीं है। दिन में माल खरीदे और रात में ठिकाने लगाए। देखना

चाहिए। कुछ-न-कुछ मसाला तो मिल ही जाएगा। बड़ा लेख न सही, कॉलम तो भर ही जाएगा।

हाथ में टार्च थामी और गले में कैमरा। डायरी और पैन तो टेबिल पर ही धरे रह गए। इसका ख्याल तो उसे तब आया जब वह मेन गेट पर पहुँचा। पर उसने डायरी लाने-ले जाने में समय को बरबाद करना बेकार समझा और सीधा सड़क की ओर सरपट भागा। मगर अब वहाँ कोई आवाज न थी और ना ही दूर तक गाड़ी की कोई रोशनी।

उसने गहरी साँस छोड़ी और अपनी निराशा पर माथा ठोका। यह सोचकर वह वापस लौट आया, शिकार बच निकला, पर मैं भी देखता हूँ कब तक बचेगा। गद्दार को अगर हथकड़ी न पहना दी तो मेरी पत्रकारिता भी बेवफा कहलाएगी।

वह अभी मैन गेट से भीतर घुस ही रहा था कि डाक बंगले के बूढ़े चौकीदार ने हल्की किन्तु कड़कदार आवाज में पूछा—'कौन है ?'

'मैं हूँ।'

'ओह बाबू ! आप ? इतनी रात गये बाहर कैसे आपको तो कमरे में होना चाहिए था।'

'अरे बाबा ! क्या बताऊं, अभी-अभी यहाँ से गाड़ी गुजरी है। इतनी रात गये गाड़ी का यहाँ चलना……। कहीं कोई……।'

'गाड़ी, कैसी गाड़ी। कहीं आप उस पौं-पौं के बारे में तो नहीं कह रहे हैं?'

'तो क्या आपने गाड़ी को जाते देखा है। किधर गई वह? किसकी थी वह? मैं उसी के लिए तो गया था, मैंने पौं-पौं........।'

'बूढ़े चौकीदार ने पत्रकार की बात को बीच में ही काटते हुए कहा 'अजी साहब! ये पौं-पौं तो वर्षों से चली आ रही है।'

'क्या कहा बरसों से? यहाँ का पुलिस प्रशासन इतना निकम्मा है?'

'गाड़ी हो तो पकड़ा भी जाए। ये तो मनुष्य के विक्षिप्त मन की दर्द भरी कहानी है।'

'मैं आपकी बात समझा नहीं बाबा!'

अब तक यहाँ न जाने कितने मुसाफिर रुके हैं और कितनों ने ही यह पौं-पौं सुनी है। मेरी रातें इस पौं-पौं को सुनने में और लोगों को इसका कारण बताने में रूंधी/बीती हैं।

'घटना तो कब की घट गई। इसी सड़क पर यही कोई दस साल पहले बड़ा जबरदस्त 'एक्सीडेंट' हुआ था। जिसमें चार लोगों ने तो घटनास्थल पर ही दम तोड़ दिया। एक आदमी बचा जो वहाँ पड़ा तो था अचेत, मगर उसके होंठ

फड़फड़ा रहे थे। रह-रहकर वह कह रहा था पौं-पौं……वह आदमी यूँ तो ठीक है, पर ये पौं-पौं अभी तक जारी है। मैं……।'

बूढ़ा चौकीदार अभी तक अपनी बात पूरी कह भी न पाया था, तभी उसे पौं-पौं की आवाज फिर से फिजाओं में तैरती दिखाई दी।

वह सीधा सड़क की ओर भागा। उसके पाँव पगडंडी पर तेजी से चल रहे थे, तो विचार कौन से रुके पड़े थे। विचारों की गति कदमों से सौ गुना तेज होती है। देखता हूँ वास्तविकता क्या है? कहीं यह बाबा भी उसी तस्कर का आदमी न हो। वैसे वह कह तो ऐसे रहा था जैसे मानो हुआ ही वैसा हो।

पत्रकार सड़क से चौराहे की ओर बढ़ गया बिना डरे, बेझिझक। उसने पाया कि चौराहे की एक ओर से कोई आदमी चला आ रहा है। उसकी चाल बड़ी तेज है। उसके हाथ भी घूम रहे हैं। वही आवाज कर रहा है पौं-पौं-पौं।

उत्सुकतावश पत्रकार उससे मिलने के लिए, आप बीती जानने के लिए उसकी ओर लपका।

वो चिल्लाया—'ओ, रेड लाइट!' एकदम झटके से रुका मानो उसने अचानक ब्रेक लगाया हो पांच सैकण्ड भी न बीता होगा कि उसने मुँह से हार्न बजाना शुरू किया—'पौं-पौं।'

पत्रकार उससे कुछ पूछने के लिए अपनी जबान खोल ही रहा था कि उस आदमी ने गुनगुनाते हुए कहा, 'अच्छा ग्रीन लाइट' और उसने हाथों से ही एक्सीलेटर घुमाने की मुद्रा करते हुए आगे बढ़ गया। पत्रकार फोटो लेने के लिए कैमरे में लगे जूम को सैट कर रहा था कि तभी उसे धक्का लगा और वह पीठ के बल नीचे गिर पड़ा। उसे लगा यह आदमी नहीं वास्तव में कोई ट्रक है जिसने उसे टक्कर मारी है।

पत्रकार झट से उठ खड़ा हुआ। उसने बदन पर लगी धूल को एक हाथ से झाड़ा और दूसरे हाथ से सड़क पर गिरे अपने कैमरे को उठाने लगा। उसने नजर घूमाकर आदमी को इधर-उधर देखना चाहा, पर नजर न आया। तभी उसने सुनी स्वयं से दूर होती आवाज—पौं-पौं। पत्रकार खुद विक्षिप्त-सा डाक बंगले की ओर लौट चला, सोचता हुआ कि आखिर कब थमेगा यह पागल सिलसिला?

याद

लड़ाई बड़ी जोरों से चली थी। अपनी जमीन से सबको प्यार होता है। इसलिए दुश्मनों का जमकर मुकाबला किया गया। दुश्मनों की सेना वहुत बड़ी थी, इसलिए हार का सामना करना पड़ा।

दुश्मन सेना ने खुलकर लूटपाट की। जमीन तो अपने साथ ले जाने से रहे, धन-दौलत ही उनकी लूट का खास लक्ष्य था। जाते-जाते वे शहर को इतना उजाड़ गये मानो वहाँ कोई समुद्री तूफान आया हो या भूतैया ज्वालामुखी फटी हो। उन्होंने हजारों लोगों को भी बंदी बनाया और अपने देश ले गए। सारे बंदी गुलाम कहलाने लगे। रात-दिन उन्हें हुकूम की तालीम करनी पड़ती और पता है इस मेहनतकशी के बदले उन्हें क्या मिल पाता? बड़ी मुश्किल से दो जून रोटी। पेट में भूख और कमर पर कोड़ों के निशान, आह!

दुश्मनों के पास गुलामों की बेशुमार भरमार थी। धन दौलत की उनके पास कमी न थी। खूटने लगा तो बस केवल अनाज ही। गुलाम उनकी बंजर भूमि को उपजाऊ बनाने के लिए ही थे।

गुलामों में एक अनाथ लड़का भी था। वह नहीं जानता था कि उसके माता-पिता कहाँ रह गए। वे उसके ही देश में

हैं या युद्ध में मारे गये। उसे जब-तव अपने माता-पिता की याद सताया करती। अपने घर वापस लौटने की ललक उसे नींद तक न लेने देती। वह मौका ढूंढने लगा अपने देश भाग निकलने के लिए।

आखिर एक दिन उसने अपना साहस बटोरा और वहाँ से भाग निकला। मासूम बच्चा नहीं जानता था अपने देश की राह। उसे तो वस प्रेरित किये जा रही थी, भीतर की चाह। जो भी मिलता, उससे वह अपने देश का रास्ता पूछता। लोग कहते, 'तुम्हारा देश वहीं है, जिस ओर यह रास्ता जा रहा है।'

वह चलता रहा। पेट में भूख लगती तो किसी से भी रोटी माँग लेता। अपनी कमीज का पर्दा उठाता। गाँव की महिलाओं को अपना कमर-पिचका पेट दिखलाता। बड़े करुण दर्द भरे स्वर में कहता, 'माई! दो रोटी दे दो। बड़ी जोर की भूख लगी है।'

संसार में जहाँ बुरे लोग हैं, वहाँ भले लोग भी मिल ही जाते हैं। उदारमना औरतें उसे प्रेम से रोटी खिला देतीं। पानी की कहीं कमी नहीं थी। किसी भी झील-तरिया से दो घूँट पानी गले में उतार लेता। वच्चा आखिर वच्चा ठहरा; गरीव था, अनाथ था। पाँव तो सवके एक जैसे हैं। तरीकों में फर्क हो सकता है, जीवन में नहीं। ज्यादा थक जाता तो किसी पेड़ की टहनी के नीचे आराम कर लेता।

जव-तव उस रास्ते से एक गाँव से दूसरे गाँव जाने वाले तांगे भी उसे मिल जाते। वह अपने तंग हाथों को फैलाते हुए

ताँगे को रोकता और कहता, 'बाबा ! मुझे भी अगले गाँव तक ले चलो। मेरे पास पैसे भी नहीं हैं और आगे चल भी नहीं सकता।'

कोई ताँगे वाला दया कर उसे बिठला भी लेता। कोई यह कहकर आगे निकल जाता 'फोकट में कौन तेरा बाप बैठाएगा !'

लड़का बेचारा जल-भुन जाता। मन मसोस कर रह जाता। सिर्फ इतना ही कहता, 'बाबू ! न बैठाना हो तो न बैठाओ। मेहरबानी कर मेरे बापू के बारे में कुछ मत कहो।'

कभी-कभी तो कोई ताँगे वाला कुछ आगे बढ़कर रुक जाता, जैसे ही उसे अपनी गलती का अहसास होता। वह चिल्लाता, 'चल आ, अवे दौड़ बे ! ताँगे के उस कोने में बैठ जा। सोचा छोड़ ही दूँ तुम्हें।' ताँगेवाला चाबूक हवा में लहराता और उसका ताँगा टिक-टिक चल पड़ता।

दिन कई बीत गए, पर उसका देश तो अभी भी दूर था। जाड़ा नजदीक आ गया, उसके पास ओढ़ने के लिए एक भी लबादा न था। बदन के ऊपर एक मैली गंजी थी और नीचे कथरी-सी चड्डी। मगर उसने हार न मानी। वह ठिठुरती ठंड में भी आगे बढ़ता रहा। घर की याद ही उसकी ताकत थी और वही उसके ठिठुरते बदन को सेकने वाली अंगीठी थी।

आज बारिस काफी तेज गिरी थी। एक तो बदन पर कपड़े नहीं और ऊपर से बादलों से फटकर गिरता बर्फीला पानी। आज तो उसे कोई गाँव भी दिखाई नहीं दिया

अपने हाथों को सीने में सिकोड़े थर-थर काँपता हुआ भी चलता रहा। भूख उतनी ही कड़ाके की लगी थी, जितनी कड़ाके की ठंड पड़ रही थी। पानी तो सड़क के दोनों तरफ बहुत गिरा पड़ा था, पर पीये किस पर ! भूखा कभी प्यासा नहीं होता। प्यास तभी लगती है जब पेट भरा होता है।

अचानक उसने पाया कोई बूढ़ा आदमी एक चट्टान की ओट में बैठा है। चेहरे पर सफेद दाढ़ी उभर आयी है। चमड़ी पर झुर्रियाँ पड़ गई हैं। उसके हाथ में रोटियाँ हैं। बड़े चाव से वह रोटियों को चबाये जा रहा है। लड़के की आँखों में आशा की नई किरण जगी। उसने बूढ़े के पास जाकर कहा, 'बाबा, बहुत भूखा हूँ।'

बूढ़ा झल्लाया, 'भूखा है तो मैं क्या करूँ ! मैं तो खुद जहाँ-तहाँ से बामुश्किल जुगाड़ पाया हूँ। अच्छा बैठ, जो भी है, बाँटकर खा लेते हैं।'

लड़का बाबा के पाँवों के पास बैठ गया और सूखी रोटी को कुटर-कुटर खाने लगा। बूढ़े के पूछने पर अनाथ लड़के ने अपनी सारी आप बीती कह सुनाई। आखिर बूढ़े ने लम्बी सांस छोड़ते हुए कहा, 'हूँ तो तुम भी वैसे ही हो। चलो मैं भी वहीं जा रहा हूँ जिस राह पर तुम हो।'

लड़का खुश हुआ। यात्रा में एक से दो भले। अकेलापन भी नहीं खटकता और बातों-ही-बातों में सफर पार लग जाता है। दोनों ही खानाबदोश। बूढ़े के साथ चलते हुए भी करीब एक हफ्ता बीत गया। आज वे पहाड़ी पगडंडियों पर चल रहे

थे। उनके सांस फूल गए, पाँव जवाब दे बैठे, फिर भी दम-मारो-दम कदम-दो-कदम चलते रहे। अचानक लड़का गिर पड़ा। शायद उसके घुटनों में हड्डी की चोट आ गई थी। बूढ़े ने उसको सहारा देकर खड़ा किया, मगर वह चल न पाया। बूढ़े ने उसे अपनी गोद में ले लिया और विश्राम करने के लिए बैठ गया। लड़का बूढ़े की छाती से लग गया। वह सुबक-सुबक कर रोने लगा। कहने लगा, 'बाबा! मुझे छोड़कर मत जाना। अगर तुमने मेरा साथ छोड़ दिया तो मैं अपनी माँ से कभी न मिल पाऊँगा। बाबा! क्या तुम मुझे मेरे घर तक पहुँचा दोगे?'

बूढ़े की आँखें भर आईं। उसके गले से इतना भी न निकल पाया कि हाँ मैं तुम्हें पहुँचा दूँगा। उसने सिर्फ अपना सिर हिलाया, जिसका मतलब साफ था कि वह उसका साथ निभाएगा।

लड़के को पता भी न चल पाया कि कब उसकी आँखें मुंद गईं। जब उसकी आँखें खुलीं, तो उसने अपने आपको अस्पताल की आपात-कोठरी में पाया। उसने होश आते ही बाबा को पुकारा, 'बाबाऽबाबा?' पर उसे उसके बाबा के बारे में कोई खबर न मिल पाई। वह दिन रात अपने बाबा को याद करने लगा, जिसने उसे ममता दी, उसका साथ निभाया।

अचानक एक दिन उसने पाया कि अस्पताल की बगल से कुछ सिपाही गुजर रहे हैं। उनके बीच कोई आदमी बेड़ियों में उलझा हुआ चल रहा है। लड़के ने आपात-कक्ष में खड़े सिपाही से पूछा, वह कौन है। सिपाही ने कहा—एक अजीब

कैदी, जो तीन-बार जेल से भाग निकला और तीनों बार इसी अस्पताल में पकड़ा गया। जब भी वह अस्पताल में आया, उसके हाथों में बेहोश लड़का होता था। ऐ-लड़के ! तुम्हें भी यही बूढ़ा यहाँ तक लेकर आया।

लड़का चौंक पड़ा। उसने कैदी को ध्यान से देखा, अरे ! यह तो वही बाबा है। वह चिल्लाने लगा 'बाबा-बाबा !' सभी सिपाहियों का ध्यान उस ओर खींचा। बाबा ने भी लड़के को देखा। बाबा के मुँह से आवाज न निकली। उसके चेहरे पर मात्र एक प्यार भरी मुस्कान उभर आई। लड़का चिल्लाता रहा, 'बाबा ! बाबा !! मुझे भी अपने साथ ले चलो।' आगे कुछ हो उससे पहले ही बाबा सिपाहियों की गाड़ी में बैठाया जा चुका था। दरवाजा धड़ाम से बंद हुआ और गाड़ी रवाना हो गयी। लड़के के मुँह से आखिरी चीख निकली 'बाबा !' और वह बेहोश हो गिर पड़ा।

घुटन

वह अपने मकान के छज्जे पर टहल रहा था। काफी देर चलने के बावजूद उसके पाँव न थमे। छज्जे की अपनी सीमाएँ थी, दीवार बार-बार आड़े आ जाती, नहीं तो पता नहीं, अब तक वह कितने मील पत्थर पार कर जाता।

वह भली भाँति जानता था आदर्श क्या है और यथार्थ की कौन सी सम्भावनाएँ क्षितिजों से उभर सकती है। यौवन की दहलीज पर उसके पाँव जमकर रखे जा चुके थे। पढ़ाकू इतना कि दो-ढ़ाई सौ पेज दिन में पढ़े बिना रात को उसे नींद न आती। बड़ी-से-बड़ी किताब को वह दो-चार किश्तों में पूरी पढ़ डालता। पच्चीसों पुस्तकें उसकी अपनी लिखी थी। पर वह प्रतिष्ठा और आजीविका से दूर किसी और बिन्दु पर केन्द्रित था।

चलते कदम वह अपने-आप पर ही खीज उठा और दे मारा सिर पर हाथ का हथौड़ा। इतना भला और शरीफ दिखने वाला व्यक्ति पता नहीं आज क्यों इस तरह कर रहा है। क्या कोई सदमा लगा है उसे या किसी संघर्ष से घबराया-बौखलाया है। खैर, जो कुछ भी हो, कहने से ही कतराता है तो कैसे पता चलेगा कि पर्दों की ओट में जीवन की कौन-सी भूमिकाएँ बन-बिगड़ रही है। एक बात तय है कि वह उद्विग्न है, पीड़ित है जरूर किसी-न-किसी मानसिक यन्त्रणा से।

अचानक उसकी मानसिक प्रत्यंचा पर कौन-सा तीर चढ़ आया, मकान की छोटी सीढ़ियों को उसने एक ही सांस में पार कर लिया और लौट आया अपने लेखन-कक्ष में, धम्म से जा पड़ा अपने बिस्तर पर, पहाड़ों से टूटे पत्थर की तरह।

कहते हैं असली लेखन वेदना की गहराइयों से फूटता है, पर उसने लिखना तो दूर, लेखनी की ओर नजर तक न डाली। क्या इसलिए कि लेखन के समय निर्द्वंद्व मनःस्थिति होनी चाहिये। नहीं, लेखक सिर्फ लिखते वक्त लेखक होता है, वह मात्र लेखक के दायरे में ही नहीं जीता। आखिर हर लेखक की जिन्दगी भी है और जिन्दगी कई करवटें बदलती है।

उसकी खीज और घुटन क्या किसी काव्य-पुस्तिका से कमजोर है? उसके रोएँ-रोएँ पर पढ़े जा सकते हैं दर्दीले नग्में, तड़फती व्यथित कविताएँ। ओह! उसकी सांस तो देखो, कितनी गर्म! कितनी तीव्र! उसके बदन की गरमाहट हर कोई समझ सकता है, पर जिस आह और कशिश में वह तिल-तिल जल रहा है, उसकी चिनगारियाँ खुद उसी की आँखों में धूल झोंक रही हैं।

'हूँ आखिर मैं कब तक यों घुटता रहूँगा। जब भी मेरे दिमाग में वे विचार और परिदृश्य मंडराते हैं, मैं अपनी ही अदाओं पर काबू नहीं रख पाता। घटना जाने-अनजाने में घट जाती है, किन्तु उसकी मानसिक व्यथा तो भविष्य में साकार होती है। मैं मानता हूँ मुझसे गलती हुई, पर अज्ञानवश। मैं अपराधी अवश्य हूँ, पर क्या अबोधदशा में हुआ दुष्कृत्य अपराध है? मैं तो सिर्फ यह कहूँगा कि वह बस कृत्य था, न सत्कृत्य न दुष्कृत्य, यदि मुझे यह बोध रहता कि यह दुष्कृत्य

है, तो क्या मैं गलत मार्ग पर कभी अंगड़ाई लेता ? मैं तब नहीं जानता था मेरी छोटी-सी गलती बाद में मेरे विचारों को इस कदर रोंधेगी, मुझे तड़फाएगी। अपराध का बोध पैदा होने पर तो 'अपराध' को अब मस्तिष्क से लौट जाना चाहिये, पर.......मस्तिष्क में जंग चलता रहा, विचारों का कारवाँ उतार-चढ़ाव भरी घाटियों से गुजरता रहा, उसे पता भी न चल पाया कब सूरज डूबा, आँखों की पंखुरियों के द्वार बन्द हुए और अतीत के पटल अचेतन मन के धरातल पर खुलने लगे।

कॉलेज में दोपहर की छुट्टी का घण्टा बज चुका था और वह दौड़ते हुए अपनी कक्षा से बाहर निकल आया। अपने दोस्तों से उसे बहुत प्रेम है और वह उनके लिए, उनके कहने पर कुछ भी कर गुजर सकता है। दोस्त उसके लिए जीवन के आनन्द-सूत्र हैं। कॉलेज में उसके दुश्मन भी हैं, पर कोई भी उसके सामने सिर उठाकर बोलने का साहस नहीं जुटा पाता। सब जानते हैं कि उसकी गलतियों पर उसे दण्ड देने की कोशिश भी एक गुस्ताखी है और उसका परिणाम साँपों के घर में हाथ डालने से कम नहीं है।

कॉलेज के बाहर कैन्टीन में सबने समोसे खाये, चाय पी और शेष बचे समय में सब करने लगे हँसी-ठट्ठा। किसी ने पूछा, बताओ, वह फल कौन-सा है, जिसे कोई नहीं खाना चाहता। पहेली बुझाने के लिए सब में दो मिनट के लिए खामोशी छा गई। जब किसी का उत्तर दमदार न आया, तो चाय की प्यालियाँ धोते छोकरे ने दूर से ही आवाज दी, 'साऽब वो फल है—रायफल।'

सब ठहाका लगा बैठे। यों ही हँसते रहे और तरह-तरह की पहेलियाँ वैसे ही सुलझाते रहे जैसे पहाड़ी लड़कियों के उलझे हुए बाल। आमोद-प्रमोद के मौसम पर वज्राघात तब हुआ, जब किसी को छठा पीरियड ध्यान में आया। उसने साथियों से कहा, 'यार ! मजाक छोड़ो। पहले यह बताओ कि छठे पीरियड का काम किया हुवा है या नहीं ?'

सबके चेहरे पढ़ने लायक थे। उन्हें ऐसा लगा, मानो उसने कोई आठवाँ आश्चर्य कह दिखाया हो। सबको एक झटका लगा। उन्हें पता था कि यदि छठे पीरियड की पढ़ाई का कार्य पूरा न हुआ, निर्दिष्ट बातों को याद न किया, तो उन्हें अध्यापक की डाँट-फटकार तो सुनने को मिलेगी ही, अभिभावकों को शिकायत पत्र भी भेजा जा सकता है।

एक ने कहा, 'रात को दूरदर्शन पर इतना अच्छा कार्यक्रम आ रहा था कि मैं तो उसे देखने में सन्दर्भ-विन्दुओं की पुनरावृत्ति करना भूल गया।'

'पढ़ा तो मैंने भी नहीं' दूसरे ने कहा।

किसी ने कहा, 'अब अच्छा तो यह रहेगा कि इस पीरियड में हम फरार रहें।'

'अरे, तेरी घड़ी में समय क्या हुआ ?'

'यही कोई सवा दो बजे हैं।'

'तो क्यों न फिलम चलें ! इतने जल्दी घर लौटना भी सवाल-तलब में फंसना है।'

सबने हाँ-में-हाँ मिलायी और चल दिये फिलम देखने।

पता नहीं, अब तक इस प्रकार कितनी फिल्में देखी जा चुकी हैं। पैसे कम पड़े तो टिकटों की कालाबाजारी कर ली और शेष बची लाभराशि से अपने लिए टिकट खरीद ली। कभी-कभार, पकड़े भी गए, पर पुलिस ने दो-चार डंडे देकर छोड़ दिया। गनीमत है कभी हवालात की हवा खाने को न मिली, वरना सारी सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाती।

समय ठहरा परिवर्तनशील। उसने अपनी पुरानी चादर उतार फेंकी और लगा नई चादर ओढ़ने। दिन बीतते गये। शहर में नई-नई फिल्म आई है और उसमें भी काफी मारधाड़, भड़कीले अन्दाज। उसने फिल्म देखने का मानस बना लिया, किन्तु मम्मी-पापा ने उसे फिल्म देखने के लिए न केवल रुपये नहीं दिये वरन् फिल्म जाने के लिए मना भी कर दिया। पापा ने कहा 'पढ़ाई की उम्र में पढ़ाई करो।' वे उसे यह कहते हुए दफ्तर चले गये, 'कॉलेज समय पर चले जाना।'

मम्मी बगल के घर में पड़ोसिन से गप्पे हाँक रही थी या यों समझिये अपना खाली समय पास कर रही थी।

वह घर में अपने कपड़े पहन रहा था। किताबों को इधर-उधर पलटकर देख रहा था, मगर उसका ध्यान केन्द्रित था फिल्म पर और किसी ऐसे पहलू पर सोच रहा था जिससे टिकट जितने पैसों का जुगाड़ हो जाये। तत्काल उसे ध्यान आया कि मम्मी की आलमारी का ताला खुला है। उसे आशा की किरण दिखाई दी। पर उसे आलमारी में ढूंढने पर भी पैसे न मिल पाये। वह हताश-निराश हो गया उसका मानस रह-रह कर बार-बार उसे प्रेरित कर रहा था, जैसे-तैसे भी

आज टिकट के पैसे जुटाने के लिए। आज यदि फिल्म न देख पाये, तो यह पराजय होगी। आखिर मम्मी मुझे पैसे क्यों नहीं देती ? क्या मेरा घर में कोई अधिकार नहीं है ? पुत्र की इच्छाओं की पूर्ति न करना अभिभावकों की ओर से पुत्र का शोषण है। मैं.......मैं नहीं, मैं शोषित नहीं होऊँगा।

आलमारी में उसे सामने ही पड़ा एक डिब्बा दिखाई दिया। उसे पता था, मम्मी इसमें अपने कुछ गहने रखती है। उसने सोचा, क्यों न इसमें से कुछ ले लूँ। पर उसकी अन्तर-आत्मा ने उसे तत्काल टोका, नहीं, यह गलत होगा। यह सरासर अपराध होगा।

उसने डिब्बे की ओर बढ़े हुए हाथ वापस खींच लिये। पाँच मिनट भी न बीते होंगे, कि अपराध-वृत्ति फिर भड़क उठी, मन अपनी शैतानियत पर उतर आया और बिना सोचे-विचारे उसने डिब्बे में से वह पुड़िया निकाल ली, जिसमें मम्मी की टूटी चूड़ियों के हीरे पड़े थे। उसने हिम्मत करके दो-चार हीरे चुराये, दरवाजे की ओर झाँका और झटपट आलमारी बन्द कर दी।

दो मिनट बाद ही मम्मी लौट आई। मम्मी ने उस पर कोई शक न किया। शक करे भी कैसे, वह तो सोच भी नहीं सकती थी कि उसका लाडला भी उसकी अनुपस्थिति में हीरे चुरा सकता है। माँ की ममता से विश्वास का ही पालन होता है, सन्देह का नहीं।

वह खुश था कि आज वह सफल हुआ। उसे उन हीरों से इतने पैसे मिल गये, जिससे वह कई महीने फिल्म देख

सकता था। आज उसने दो फिल्में देखी और कॉलेज की छुट्टी के वक्त घर लौट आया। मम्मी ने उसे कुछ नहीं कहा। उसे पता भी कहाँ चल पाया था बेटे की घिनौनी हरकत का ?

अब पैसे समाप्त होने को थे। वह कॉलेज से घर लौट रहा था। चौराहे के पास किसी मकान के बाहर भीड़ जमा थी। किसी के पिटने की आवाज आ रही थी। उत्सुकतावश वह भी भीड़ में घुस गया। उसने पाया कि पुलिस वाले किसी आदमी को डंडों से बुरी तरह पीट रहे हैं और उसको छुड़ाने के लिए प्रयासरत महिला हाथ जोड़-जोड़कर कह रही है, 'जी इसे मत मारिये। मेरे बेटे ने चोरी नहीं की। मेरा बेटा चोर नहीं हो सकता। यह चोर नहीं है, मेहरबानी कर इसे छोड़ दीजिये, इंस्पेक्टर साऽब ! इसे मत मारिये।'

पुलिस वालों ने आगे लपककर अधेड़-उम्र महिला को दूर धकेल दिया और उसके बेटे को पुलिस ले गयी। जीप घर्र-घर्र करती उसके सामने से ओझल हो गयी, भीड़ छंट चुकी, पर वह अभी भी चौराहे पर खड़ा था शून्य में अकेला। गाड़ियाँ चल रही हैं, चौराहे के बीच गुमटी में खड़ा सिपाही वाहनों का मार्ग-दर्शन कर रहा है, पर वह था इन सबसे बेखबर, और किसी डगर में जीवन के क्रान्ति-पथ पर।

उसका ध्यान तब टूटा जब उसके ही किसी साथी ने उसके कन्धे पर जोर से थापी मारी। उसने पूछा, 'क्या बात है दोस्त ? इस कदर मुँह लटकाये क्यों खड़े हो ?'

घटना के थपेड़ों से आहत व्यक्ति किसी तरह का उत्तर देने के लिये तैयार नहीं होता। वह यह कहते हुए रवाना हो गया, 'नहीं, कुछ नहीं।'

आज वह घर कुछ देर से पहुँचा था। मम्मी प्रवेश-द्वार पर खड़ी उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। मम्मी उसे देखते ही मुस्कुरायी। उसके सिर पर प्यार से हाथ फेरते हुए अपनी छाती से लगा लिया और भिगो दिया अपने मातृत्व से। बेटे को ममता का अहसास कराना माँ खूब जानती है। उसने बेटे की आँखों में निहारा, वे मुर्झायी थीं, डूबते सूरज की तरह लाल-लाल भी।

'क्या बात है बेटे ?' मम्मी ने प्यार से पूछा। पर वह इतनी हिम्मत न बटोर पाया कि मम्मी को कुछ कहे। सिर्फ इतना ही कहा, 'जी, कुछ नहीं।'

मम्मी ने उसके लिए गरम-गरम खाना बनाया, पर उसने कुछ न खाया और जा पड़ा सीधा अपनी खटिया पर। मम्मी ने फिर पूछा, क्या तबियत ठीक नहीं है बेटे ? उसने कोई जवाब नहीं दिया। मम्मी ने सोचा सरदर्द होगा।

वह बिस्तर पर टूटे बदन, कुम्हलाया पड़ा रहा। उसकी आँखों में लगातार वह घटना उभर-उभर कर आ रही थी— माँ कह रही थी इंस्पेक्टर साऽब ! इसे मत मारिये, मेरा बेटा चोर नहीं हो सकता।

बादल टकराये और कड़कती हुई बिजली ने उसे झंझोड़ा। 'नहीं, यह झूठ है।' वह सकपका उठा। रात गहरा गयी। वह अपने आप पर बौखलाया, नहीं, यह सत्य है, ममतामयी माँ ! मैंने चोरी की है। ओह ! कैसा अपराध। कैसी गलती ! काश ! पुलिस यदि मुझे पकड़ती तो मेरी मम्मी भी उसी तरह चिल्ला-चिल्लाकर कहती, नहीं, मेरा

बेटा चोर नहीं हो सकता। वह चोर नहीं हो सकता। पर, मेरी आत्मा इसे स्वीकारेगी? क्या मैं बता दूँ अपने माता-पिता से कि तुम्हारे आदर्श-पुत्र का क्या/कैसा यथार्थ है? क्या वे इसे स्वीकार करेंगे? सच्चाई कहने के बावजूद क्या मेरी मम्मी यह न कहेगी, नहीं मेरा बेटा चोर नहीं है, वह चोर नहीं हो सकता।

झुँझलाते हाथों से उसने बल्ब जलाया। अभिशप्त कमरे में रोशनी बिखर गई। बादल बाहर गरज-बरस रहे थे। वह अब भी खीजा हुआ था और स्वयं से पागल की तरह कह रहा था, 'नहीं, मैं और घुटूँगा। यह तनाव, द्वन्द्व, चोट, यन्त्रणा मैं सहूँगा इसमें जलूँगा। यही मेरे अपराध का मुझे दण्ड है और यही मेरे लिए प्रायश्चित भी।'

बरताव

'मधुऽ !'

हॉस्पिटल के कैबिन से आवाज आई। यूँ हॉस्पिटल कोई बहुत बड़ी न थी। मुश्किल से डॉक्टरों के पाँच केबिन और मरीजों के पच्चीस कमरे होंगे। फिर भी भीड़ तो भरमार थी। गैलरी में लम्बी बेंचें बिछी थीं, जहाँ मरीजों को इन्तजारी में थोड़े-बहुत समय के लिए बैठना पड़ता था। मरीज कम हों तो पाँच-दस मिनट में नम्बर आ जाता। आज तो भीड़ इतनी बेशुमार थी कि हर मरीज को मानो-न-मानो आधे घण्टे तक तो फालतू बैठना ही पड़ रहा था। छत के पंखे तो चल रहे थे, पर गर्मी इतनी मोटी कि वहाँ से खिसकने का नाम ही नहीं ले रही थी। देखो न सबके चेहरे! कपड़ों से पसीना चू रहा है। माहौल इतना उमस भरा है जैसे वह घुटन से घुट रहा हो। तसल्ली के लिए लोग अपने रूमाल की पंखी कर रहे थे। जिस किसी का नाम आ जाता संतोष से गहरी साँस छोड़ता और केबिन की ओर बढ़ जाता।

इस बीच न जाने कितनी बार केबिन के भीतर से नाम पुकारे गए और कितने ही लोग केबिन में आये-गये। अभी भी भीड़ तो थी ही। बारह बजते ही नई पर्चियाँ लेनी बंद कर दी गयी। साढ़े बारह बजे तक लगभग सभी मरीज पड़ताले जा

चुके थे। आखिरी पर्ची पर दवा का नाम लिखते हुए डॉक्टर ने चैन की सांस ली।

'बाप-रे-बाऽप कितने मरीजों को देखा है। दो सौ से कम न होंगे।' मन ही मन कह गया। डॉक्टर ने घण्टी बजाई और पल भर में ही चपरासी हाजिर था। डॉक्टर ने कहा, भइया ! जरा पानी पिलाना।

जी ! और इसी के साथ वह ठंडा पानी लेकर उपस्थित हो गया।

डॉक्टर ने अभी आधा गिलास पानी भी न पिया था कि एक महिला बदहवास-सी केबिन में घुस चली आई। उसका साँस नाक तक चढ़ आया था।

'क्या बात है ?' डॉक्टर ने गिलास मेज पर रखते हुए कहा।

महिला का चेहरा रूँआसा हो उठा। कहने लगी, 'डॉक्टर साब ! मेरे पति को बचा लीजिए। अगर उन्हें कुछ हो गया तो मैं और मेरे बच्चे कहीं के न रहेंगे।

'क्या हुआ तुम्हारे पति को ?'

'क्या बताऊँ, डॉक्टर साब ! पिछले महीने जो बिस्तर पकड़ा तो अभी तक न छूटा। अभी जैसे ही मैं उन्हें पानी पिलाने गई, उन्हें उबकी उठी और उल्टी के साथ ढेर सा खून भी आ गिरा।'

'अच्छा !'

'प्लीज, आप एक बार उन्हें देख लीजिए। आपकी जो भी फीस होगी वह........।

'सो तो ठीक है, पर........

'देखिए साहब ! जिन्दगी और मौत का सवाल है। प्लीज़……… ।'

'खैर चलो। चलता हूँ। अरे चौकीदार ! मेरा बैग लाओ तो।'

'जी, हाजिर है।'

डॉक्टर ने अपना बैग खोला। सामान चैक किया ड्रॉज से दवाइयाँ व इंजैक्शन बैग में डाले और महिला के साथ रवाना हो गया। घर पर मरीज बेसुध पड़ा था। उसका तीन साल का बच्चा पिता से लिपटा रो रहा था। महिला ने लपककर बच्चे को अपनी गोद में उठा लिया। डॉक्टर ने मरीज को देखा और कहा, 'ज्यादा घबराने की बात नहीं है। बीमारी गर्मी के कारण बढ़ी है। मैं इंजैक्शन लगा देता हूँ। ठीक हो जाएगा।'

इंजैक्शन लगते ही मरीज को कुछ होश आया। डॉक्टर ने पर्ची पर दवाइयाँ लिख दीं। उसने महिला से कहा, 'ये दवाइयाँ खरीद लाना और समय पर दे देना। कल मुझे दिखा देना।

देखो, यह पहले नम्बर वाली दवा सुबह-दोपहर-शाम लेनी है। लाल टिकड़ी हैं ये। कैप्सूल नम्बर दो पर है। इसे सुबह-शाम दूध से। ये जो आखिरी गोली है न, नींद की है। रात को दे देना।

'जी।'

'अच्छा हाँ देखो दोपहर में मौसमी का रस जरूर पिला देना।' यह कहते हुए डॉक्टर खड़ा हो गया।

महिला ने पूछा—'सर ! आपकी फीस कितनी ?'

'बीस ।'

महिला ने ब्लाउज में रखे रुपये निकाले । उसने रूँआसे चेहरे से कहा, डॉक्टर साहब ! अभी पन्द्रह ले लीजिए, पाँच कल पहुँचा दूँगी ।

डॉक्टर ने रुपये जेब में रखते हुए कहा, 'ठीक है कल पहुँचा देना ।' और डॉक्टर सीढ़ियाँ उतरने लगा ।

महिला ने अपने पति से कहा, 'तुम अपने को संभालना मैं दवाइयाँ लेकर अभी आती हूँ ।

'कहाँ से लाओगी ?'

'उसकी चिंता तुम मत करो । जा रही हूँ, कुछ-न कुछ बंदोबस्त हो ही जाएगा ।'

'कहाँ से करोगी बंदोबस्त ? यहाँ तो हमें कोई जानता भी नहीं है, जो तुम कर्ज ले सको । तभी उसकी नजर अपनी पत्नी की बंद मुट्ठी की ओर गयी । बोला, 'अरे ! ये क्या ? तुम्हारे हाथ में....... ।

'कुछ नहीं है ।'

'तुम मुझ से झूठ बोल रही हो । मुझे अपनी बंद मुट्ठी दिखाओ ।'

'कह दिया न, कुछ नहीं है ।'

'अच्छा खाओ मेरी कसम ।'

महिला का चेहरा एकदम उतर आया, 'नहीं ऐसा मत कहो । जो है तुम्हारा है । तुम्हारे मंगल का है ।'

कहीं मंगलसूत्र तो....... । पति ने उसका हाथ पकड़ लिया और बंद मुट्ठी खोल दी, 'ये क्या ? तुम मंगलसूत्र बेचने

चली थी। ऐसा मत करो। रह-सह के यही एक मंगलसूत्र तो तुम्हारे पास बचा है।'

'अगर तुम रहे तो मंगलसूत्र कई बन जाएँगे। पति को खोकर मंगलसूत्र बचाकर पत्नी क्या करेगी ?'

'वो तो ठीक है, पर मैं अपने जीते-जी........।'

पत्नी ने पति के मुँह पर अपना हाथ रख दिया, 'भगवान तुम्हें मेरी उम्र भी लगा दे। इस मंगलसूत्र की चिंता छोड़ो।'

पति, पत्नी का कुछ प्रतिकार न कर सका। उसकी आँखों में पत्नी के लिए प्यार के आँसू उमड़ आए। वह सिर्फ इतना ही कह पाया, 'भगवान। जन्म-जन्मान्तर तक तुम्हारा साथ दे।'

महिला जीना उतरने लगी, मगर अचम्भा तो उसे तब हुआ जब उसने डॉक्टर को सीढियों के नीचे जूते पहने खड़ा देखा। उसकी आँखें नम थीं। उसने महिला को देखते ही अपनी जेब से वे पन्द्रह रुपये निकाले, जो उसे महिला से फीस के रूप में मिले थे। उसने महिला की ओर वे रुपये बढ़ा दिए। कहा, 'बहिन ! पर्ची मुझे दे दो, दवाइयाँ मैं भिजवा दूँगा। रुपये-पैसे की जरूरत पड़े तो मुझसे ले जाना। मेहरबानी कर अपना मंगलसूत्र मत बेचना। सुहाग की एक यही तो निशानी है।'

महिला स्तब्ध थी डॉक्टर के बरताव पर।

नीयत

पता नहीं क्यों, उसे सरपंच के बेटे का अपने घर में आना-जाना अच्छा नहीं लगता था। सरपंच का बेटा जब-तब उसके घर आया-जाया करता था। उसके माँ-बाप सरपंच के बेटे को चाहते भी बहुत थे।

कोई व्यक्ति उसके घर पर आये, इसमें उसे भला क्या एतराज! पर कंधे पर थापी दे मारना, हाथ पकड़ लेना या चाय पीते समय प्याले की ओट में घूरते रहना, उसे ठीक न जंचा। लेकिन वह बेचारी क्या कर सकती? खुद चौदह साल की मासूस बच्ची!

आखिर उसने हिम्मत बटोरी और अपनी माँ से इस बाबत शिकायत की, 'देखो माँ! सरपंच के बेटे का इस कदर रोजाना बेरोकटोक आना-जाना अच्छा नहीं है। कहीं कुछ........।'

माँ तो बेटी की बात सुनते ही सकते में आ गयी, कहने लगी—'पता है, ये बात तू किसके लिए कह रही है? अरी, इत्ते ऊँचे और शरीफ आदमी की खातिर आखिर तूने इत्ता गलत सोच कैसे लिया?

'माँ मुझे तो........।'

'मुझे तो क्या ? सरपंच का बेटा हमारे घर आये, अरे ! यह तो अपने लिए शान की चीज है। वो आये तो इससे तुम्हें कैसी जलन ?'

उसने माँ की डाँट सुनकर चुप्पी साध ली। इसके अलावा चारा भी क्या था !

किसी रिश्तेदार की मौत की खबर पाकर शोक जतलाने के लिये उसके माँ-बाप बेटी को यह कहकर चले गये, 'हम सबेरे तक चले आएँगे, पीछे खयाल रखना।'

उसने घर का काम-काज निपटाया। स्कूल का 'होमवर्क' पूरा किया और सो गई। नींद उसकी तब टूटी, जब उसने ड्योढ़ी को खटखटाते सुना। दीवाल-घड़ी ने उसी समय दस का टंकोरा बजाया। उसने यह सोचकर दरवाजा खोल दिया कि शायद माँ-बापू जल्दी निपट आये हैं। मगर जब उसने दरवाजा खोला तो वह हक्की-बक्की रह गयी। सामने सरपंच का बेटा नशे में धुत्त खड़ा था।

उसने पूछा, 'आप इस समय कैसे ?'

पर सरपंच का बेटा उसकी बात का कोई जवाब न देते हुए बेखौफ घर में घुस आया और उसने भीतर से दरवाजे की साँकल चढ़ा दी।

वह घबरा उठी—'पता नहीं, इसकी क्या मंशा है ! कहीं यह कुछ चुराने के लिए तो नहीं आया है।' उसने एकदम चिल्लाना चाहा, परन्तु उसकी चीख बाहर न निकल पायी।

सरपंच के बेटे ने अपने हाथ से उसका मुँह भींच लिया और फिर उसने वह सब कुछ किया जिसके लिये वह जिंदा साया अंधेरी रात में आया था।

सरपंच का बेटा अपनी हवश पूरी करके चला गया। वह बदहवाश-सी बीच आँगन में पड़ी अपने भाग्य को कोस रही थी। सारी रात वह विकल्पों के उधेड़-बुन में खोयी रही। पौ फट चुकी थी। दरवाजा अभी भी खुला था। रात की घटना से वह इतनी डरी सहमी थी कि उसने सरपंच के बेटे के चले जाने के बावजूद दरवाजे को ओढ़ाला तक नहीं।

उसके माँ-बाप के आने का समय हो गया था। पहले तो उसने सोचा था, वह यह सारी घटना अपने माँ-बापू को सुनायेगी, पर माँ-बापू के चले आने पर उन्हें इसकी सूचना तक देना उसे बड़ा शर्मनाक लगा। लज्जा के मारे वह बोलना चाहते हुए भी कुछ न कह पायी।

उस दिन के बाद सरपंच का बेटा उसके घर कभी न दिखाई दिया आता भी क्यों? अब उसे जरूरत भी क्या थी? पर उस मासूम को क्या मालूम था कि उस रात के अभिशप्त क्षण उसके लिए कितने महंगे पड़ेंगे।

धीरे-धीरे उसका मन उचटा-उचटा-सा रहने लगा। खाने-पीने में उसकी कोई दिलचस्पी न रही। स्कूल भी जाती, घर का काम-काज भी सारा निपटा देती पर बेमन से। उसे अपना पेट भी कुछ भारी महसूस होने लगा। वह तो कुछ समझती भी न थी शायद ऐसे ही कोई फुलाव आ गया हो।

बर्तन मलने के लिये जैसे ही वह नीचे झुकी कि जोर से उसे उबकी आयी। फिर तो उबकाइयों का सिलसिला ऐसा चला कि रुक-रुक कर उबकाहट-ही-उबकाहट। माँ यह देख कर दंग रह गई, क्योंकि ऐसी उबकाइयाँ तो उसी को आती हैं, जिसके पेट में बच्चा पल रहा हो। अभी माँ कुछ निर्णय ले पाती कि तभी उसे जोरदार उल्टी हुई। उसके बाद तो पेट में ऐसा शूल उठा कि वह दर्द से कराह उठी। माँ को संदेह हुआ। उसने अपने तजुर्बे से उसका पेट पड़ताला तो ठूंठ-सी जड़ हो गयी।

माँ ने जड़ स्वर में कहा, 'अरी, तेरे तो गर्भ है।'

'मतलव ?'

'अरी मतलब पूछती है ? 'सच-सच बता, तूने किसके साथ मुँह काला किया ?'

जब वह मारे लज्जा के मौन रह गई तो माँ ने झल्लाते हुए फिर पूछा, 'अरी बोलती क्यों नहीं, यह किसका नाजायज पाप पेट में लिये फिर रही है ?' माँ ने बापू को आवाज लगाई। वे दौड़े-दौड़े आये, 'अरे क्या हुआ ?'

'होना क्या है, अब तो कहीं के न बचे। इस कलमुँही ने हमारी नाक कटा दी है।'

'पर हुआ क्या, कुछ बतलाओगी भी या यों ही झल्लाती रहोगी ! तो प्रेम से······ ?' 'अपनी लाडली का पेट देखो और फिर कहना प्रेम से······ ।'

जब बापू को अपनी कुँआरी बेटी के गर्भवती होने की जानकारी मिली तो उनकी मर्दानी मूँछ भी कुम्हला उठी

और चेहरा शर्म-से झुक गया। उन्हें इस बात की सच्चाई पर विश्वास न हुआ। वे अपनी इकलौती लाड़ली के चरित्र से पूरी तरह वाकिफ थे। उन्हें तो गर्व था अपनी बेटी पर।

बापू रोते हुए अपनी बेटी से बोले—'बिटिया! यह मैं क्या सुन रहा हूँ? अगर तुम्हें कोई पसन्द था तो मुझे कह देती। मैं तुम्हारे हाथ पीले करवा देता। तूने तो हाथ काले.......' और यह कहते हुए बापू का गला भर आया। 'बता वह कौन है?'

वह बापू के आँसू को सह न सकी। उसने आज तक कभी अपने बापू की आँख तो क्या दिल भी नम न पाया। आखिर उसने रोते-शर्माते सारी आपबीती कह सुनाई।

सरपंच का शादीशुदा बेटा ऐसी घिनौनी करतूत कर सकता है, यह बापू ने कभी सपने में भी न सोचा था। जितनी उम्र उसकी बेटी की थी....... वैसे तो सरपंच के बेटे के भी तीन-चार लड़के लड़कियाँ हैं। बापू गुस्से से लाल-पीले हो उठे।

'तो उसकी ये हिम्मत! हम गरीब हैं तो क्या हुआ, हमारी भी इज्जत-आबरू है। उसने आज मेरी बिटिया पर हाथ डाला है, कल वो किसी और की बिटिया पर भी अपने पापी हाथ डालेगा, साला सरपंच का बेटा है, तो क्या, छोड़ूँगा नहीं।' बापू ने गुस्से में कहा। बापू ने अपनी रोती हुई बेटी को ढाँढस बँधाते हुए कहा—'बेटी, तू चिन्ता मत कर। जब तक मैं उसका सफाया नहीं कर दूँगा, तब तक चैन से नहीं बैठूँगा। उसकी मौत के लिये, तेरी कसम।'

'पागल हो गये हो क्या ? अरे ऐसा करने से तो तुम्हारे हाथों में हथकड़ियाँ लग जायेंगी और फिर तुम उसकी जान लेकर अपनी बेटी का कलंक धो सकोगे ? मैं तो कहती हूँ कि सरपंच के बेटे से बात की जाये और नाक सीधी बनाये रखने के लिये दोनों की शादी करवा दी जाये।'

बापू इस बात के लिये तैयार न हुए। पर माँ अपनी जिद पर अड़ी रही। आखिर माँ सरपंच के बेटे से गुपचुप मिली। उसने यह तो स्वीकार कर लिया कि वह उस रात उसके घर आया था और उसने वह सब कुछ किया, जो उसकी बेटी ने उसे बताया। कहने लगा, वह उस समय शराब के नशे में धुत था इसलिए ऐसा कर बैठा। उसने उसकी माँ को पाँच हजार रुपये इसलिए थमाये कि वह इस बात का जिक्र किसी से न करे। बातचीत के दौरान इस बात पर भी सहमति हो गई कि वह उसकी बेटी को अपनी दुधारू गायों की देखभाल के लिए नौकरी रख लेगा।

ऐसा ही हुआ। उसने एक लड़के को जन्म दिया। सारे गाँव में, हर चौपाटी-चौराहे पर उसी की चर्चा थी। किशोरों को उसके बाबत बातें करने में मजा आता तो बूढ़े-बुजुर्ग लोग बात करने में भी लजाते थे। बहरहाल, गाँव में कोई भी बात हो, इस कुआँरी माँ का जिक्र तो चाहे-अनचाहे हो ही जाता।

माँ ने उसे जब सरपंच के बेटे से हुए समझौते के बारे में बताया तो पहले तो वह तैयार न हुई पर उसके दिल में उमड़ती नफरत और क्रोध-की आग ने हल्के से मंथन के बाद मंजूरी दे दी।

उसने दिनभर गौशाला में गायों की चाकरी की। बेटे को दूध पिलाया और सुला दिया। सो तो उसे भी जाना चाहिए था, पर नींद आये किस झरोखे से! उसकी तो रग-रग में अजीब हलचल थी।

एकदम उसे किसी के कदमों की आहट सुनाई दी। पहरेदार की सीटी में पदचाप क्षण भर के लिये ही धुँधला गया हो, पर उसे अहसास हो गया कि कोई उसी ओर चला आ रहा है। उसने दूर से ही कड़कती आवाज में पूछा—'कौन?'

'मैं हूँ।' उसे पहचानने में देर न लगी ये आवाज किसकी है। वह बुदबुदायी—'तो पहले छिपकर आये थे और अब खुलेआम। पापी की नीयत तो हमेशा पाप की ही रहती है। मगर जब तक इस देह में प्राण है तब तक मैं इस कमीने को शरीर तो क्या छाया तक न छूने दूँगी।'

अपने आप को बचाने के लिये वह जैसे ही पीछे सरकी कि उसका हाथ किसी चीज से टकरा गया। उसने झपटकर देखा, यह तो वही दाँती है, जिससे उसने गऊओं के लिए घास काटी थी।

उसके दिल-दिमाग में प्रतिशोध की आग यूँ भी भड़क रही थी। उसने मन में हटात् जो निर्णय लिया, नहीं जानती थी कि उसके परिणाम उसे किस मोड़ पर ले जायेंगे।

सरपंच का बेटा अभी उसकी ओर बढ़ा ही था कि एक चीख के साथ सारा मौहल्ला जाग उठा। सब लोग दौड़े आये। सरपंच का बेटा गौशाला में लहुलुहान पड़ा अन्तिम साँसें गिन रहा था। दाँती उसके जिगर के पार थी।

दूसरे दिन पंचायत जमी। सरपंच के बेटे की मौत गाँव भर के लिए अजूबी घटना थी। पंचायत की हंगामी बैठक में सब लोगों ने उसे दुत्कारा। किसी ने कहा 'यह कलमुँही चुड़ैल है' इसे भूखे कुत्तों के सामने फेंक दिया जाए, ताकि वे इसकी बोटी-बोटी नोच सकें।

सरपंच ने भी हाँ-में-हाँ मिलायी। सरपंच अपना फैसला सुनाए, तब तक तो किसी युवक ने कहा, 'एक हत्यारिन को सबक जरूर मिलना चाहिए, किन्तु पहले उससे यह तो पूछा जाए कि उसने सरपंच के बेटे की हत्या क्यों की? कल तक जिस लड़की पर सारे गाँव वाले नाज करते थे। उसके कुँआरेपन में गर्भवती होना, बच्चा होना, सरपंच साहब के बेटे का कत्ल करना, इनके पीछे वास्तव में रहस्य क्या छिपा है?

यद्यपि सरपंच नहीं चाहता था कि उसे पंचायत में बुलाया जाए, पर उसे बुलाना पड़ा। जब वह बैठक में आई तो उसकी आंखों में अभी भी जहाँ एक ओर लज्जा का भाव साफ झलक रहा था वहीं साहस का भी। उसके मन में प्रसन्नता भी थी और प्रायश्चित भी। जब उसने गाँव वालों के आग्रह पर अपनी दास्तान सुनाई तो खुद सरपंच चकरा उठा। उसे अपने बेटे की गलत हरकत से नाखुशी जरूर थी, पर वह उसकी मौत का बदला लेना भी अपनी सरपंची की पहुँच समझता था।

सरपंच ने कहा, 'अगर मेरे बेटे ने कोई गलत कदम उठाया तो तुम्हें पंचायत के सामने अपनी दलील देनी चाहिए थी। कानून को अपने हाथ में लेने का हक किसी को नहीं है। तुम्हें इस हत्या का दण्ड जरूर मिलेगा।'

वह युवक जो गाँव का सबसे शिक्षित था, कहने लगा 'शायद इसमें इस लड़की का कोई दोष नहीं है। बलात्कार के मामले में आत्मरक्षा के लिए यदि कोई हत्या करता है तो यह कानूनन जुर्म नहीं माना जाता।'

एकाएक पंचायत में बैठे पचासों लोग जो सरपंच के पक्ष के आदी थे, चिल्लाए, 'तुझे सरपंच साहब के मुँह लगते शर्म नहीं आती ? तुझे अगर इसकी इतनी पड़ी है तो तू अपने घर में क्यों नहीं रख लेता इसे' ?

युवक सोच में पड़ गया। सरपंच ने टोंट कसते हुए कहा, 'क्यों बे ! अब क्यों चुप है ? बड़ी हमदर्दी जतला रहा था।'

युवक ने सरपंच को कनखियों से घूरा। कहा, 'ठीक है इसे मैं रखूँगा।'

लोग उसके जवाब से आश्चर्य में पड़ गए। जो व्यक्ति अविवाहित रहने की कसम खा चुका है उसका इस कदर पलक झपकते हामी भरना वास्तव में था ही आश्चर्य का कारण।

युवक ने भरी पंचायत में उसका हाथ थाम लिया और युवती की गोद से बच्चे को अपने आगोश में ले लिया। युवती की आँखों में आँसू थे, जबकि पंचायत की आँखें युवक की पहल पर आत्मग्लानि से भर उठीं।

भलमनसाहत

प्लेटफार्म की घड़ी में ठीक आठ बज चुके थे। आठ के घंटे की आखिरी आवाज अभी तक माहौल में गूँज रही थी। रवानगी का सिगनल मिल चुका था। वह अपनी सीट पर बैठ चुका था। उसे गाड़ी में बैठे आधे घण्टे से भी अधिक समय बीत चुका था। हालांकि उसका रिजर्वेशन था फिर भी समय से पहले पहुँचना उसकी आदत-सी थी। वह जिस सीट पर बैठा था, खिड़की दो फीट ही दूर थी। आखिर एक सीट का ही तो फासला था। खिड़की वाली सीट अभी तक खाली थी। इंजन ने चलने की दूसरी सीटी बजा दी थी।

युवक ने सोचा कितना अच्छा होता कि उसे खिड़की वाली सीट मिल जाती। सफर का मजा तो खिड़की वाली सीट से ही आता है। चलती गाड़ी पेड़, पहाड़ तो ऐसे लगते हैं, मानों वे रेल से विपरीत दिशा में भाग रहे हैं। बीच में आते 'रेलवेब्रिज', नदियाँ-नाले, हरे-भरे लहलहाते खेत, सुरंगें पता नहीं कैसे-कैसे मनोरम दृश्य दिखाई देते हैं।

बेचारे टिकट-बाबू को क्या पता कि मैं खिड़की वाली सीट को पसंद करूँगा। यूं गलती मेरी भी है जो मैंने टिकट-बाबू से कहा नहीं वरना उसके घर का क्या लगता वह तो खिड़की वाली सीट की टिकट काट देता। पर चिंता की बात नहीं गाड़ी चलने वाली है और इस सीट की सवारी अभी तक आई नहीं, आराम से बैठकर जाऊँगा।

उसके साथ कोई छेड़छाड़ कर भी लेता पर वह साफ बच निकलता।

वह युवती के बगल में बैठा था। जितना नजदीक आज वह बैठा था। उतनी नजदीकी कभी न थी। रात बढ़ती गई। गाड़ी स्टेशनों पर रुकती-रुकाती सवारियों को उतारती-चढ़ाती सरपट भागी जा रही थी।

गाड़ी के हिचकोले से न चाहते हुए भी युवक का शरीर बार-बार युवती से छू जाता। दोनों की आंखों में नींद भी मंडरा रही थी। इस अरस-परस से युवक अपने को बार-बार बचाना चाहता था, पर पता नहीं क्यों बाद में उसे यह करीबी सुहाई। मानसिक तौर पर वह आज तक जिससे बचता रहा था, आज न जाने क्यों उसे अच्छा लग रहा था।

युवती नींद के आगोश में लेट चुकी थी। उसकी गर्दन युवक के कंधे का सहारा ले चुकी थी। युवक ने उसे हटाने का प्रयास न किया। मन-ही-मन वह इस आकर्षण के प्रति चकित था। वह सोचने लगा मेरे मन में आज प्रतिकार क्यों नहीं है ! क्या यही मेरे निसर्ग का भाग्य था। अब तक बचना और आज सुहाना मेरे अंतर-स्वभाव का यह कैसा विरोधाभास! तो क्या सचमुच मुझे तृप्ति मिल रही है ?

तभी गाड़ी में जोर का हिचकोला लगा और युवती का सिर युवक की जांघ पर आ टिका। युवती अभी भी गहरी नींद में थी। उसके खुले बाल युवक के हाथों पर बिखर गए और वह रोमांचित हो उठा। उसकी सुन्दरता उसका चित्त-चोर बन बैठी। पता नहीं कब स्वत: उसका हाथ युवती के केशों से खेलने लगा !

उसकी अंगुलिया उसके मांग-स्थल से छू गई। वहां सिंदूर की लालिमा नहीं थी, जिससे उसने भांप लिया, वह अभी तक शादी-शुदा नहीं है। उसके मन में विचार आया कि वह युवती के जगने पर उससे बात करेगा और उसके साथ विवाह का प्रस्ताव भी रखेगा।

उधेड़वुन चालू थी। युवती ने नींद में ही अपनी करवट बदली। उसका बाँया हाथ सीट के नीचे की ओर लटक गया। युवक उसे दोबारा सीट पर लाने के लिए जैसे ही झुका, वह एकदम चौंक उठा। उसकी कोहनी पर सफेद दाग था। 'ये क्या, सफेद कोढ़ ?'

और वह हड़बड़ाहट में चौंक कर खड़ा हो जाता है। युवती का सिर धम्म से सीट पर आ गिरता है। किन्तु उसकी नींद तो अब भी बरकरार है, मानों उसने डिब्बे में चढ़ते ही नींद की गोलियाँ खा ली हो।

एकाएक युवक ने सामने खड़े बुजुर्ग व्यक्ति से कहा, 'दादा आप खड़े-खड़े थक गए होंगे, सीट पर बैठ जाइये।' और यह कहते हुए वह अपनी सीट से उठ खड़ा हुआ। बुजुर्ग आदमी खुश था। और युवक को मन-ही-मन इस भलमनसाहत के लिए दुआएं दे रहा था। युवक ने सारा सफर डंडे को पकड़कर खड़े-खड़े तय किया, उस युवती को नफरत से निहारते हुए।

बदलाव

ट्राली रेल पटरी पर सरपट दौड़ी चली आ रही थी। अधिक नहीं तो घंटे में पन्द्रह मील की रफ्तार तो थी ही। कोई अधिकारी ट्राली पर बैठा था, बड़ी इत्मीनान से।

दो आदमी ट्रॉली के पीछे बने स्टेण्ड पर एक पाँव के बल खड़े थे। दूर से ही लग रहा था कि उन्होंने ट्रॉली को रफ्तार देने के लिए बड़े जोरों से धक्का लगाया था। उनका काम ही सुबह-शाम या जब-तब साहब का हुक्म होता और ट्रॉली को धक्का लगाना पड़ता। इसे चाहे उनकी सेवा समझ लो या पेशेवर नौकरी।

चौकी नम्बर पचास के नजदीक आते ही ट्रॉली वालों ने हल्का-सा ब्रेक लगाया और उनकी चौपइया गाड़ी धीरे होने लगी। चौकी पर पहले से ही आदमी मुस्तैद था। साहब के ट्रॉली से नीचे उतरते ही उसने एक सिपाही के अन्दाज में सैल्यूट मारा।

साहब इस सम्मान से खुश हो गया। उसने मुस्कराते हुए कहा, 'क्या पहले कभी फौज में काम किया है ?'

'जी नहीं ! फौज में तो काम नहीं किया, पर फौजी बनकर रहना जरूर सीखा है।'

साहब ने उसके कंधे पर एक हल्की-सी थापी दी, जिसका अर्थ साफ था कि साहब उसके जवाब से प्रसन्न हुए हैं और थापी के रूप में धन्यवाद दे रहे हैं। साहब ने चौकी को पूरी तरह से पड़ताला। चौकी साफ-सुथरी थी। सारे सामान व्यवस्थित रखे हुए थे। सब्बल और चाबी भी। कमरे में समय सारिणी कांच की तस्वीर में जड़ी हुई थी। चौकी के बाहर एक कोने में कुछ सब्जियां भी लगी हुई थी। यद्यपि सब्जियां उगाने के लिए रजा नहीं थी। साहब की नजर सब्जियों पर पड़ी पर उन्होंने कोई ऐतराज नहीं किया।

साहब रवाना होने लगे। चौकीदार ने एक और सैल्यूट दिया। साहब ने इतना ही कहा, 'कल सुबह बड़े साहब 'इंस्पेक्शन' के लिए आ रहे हैं। ध्यान रखना, कोई शिकायत न आये।'

'जी साहब !'

ट्रॉली फिर चल पड़ी, इक्यावन नम्बर चौकी की ओर। वह धक्कामार ट्रॉली को जाती हुई देखता रहा। तब तक उसकी नजर पटरी और ट्रॉली से टिकी रही, जब तक ट्रॉली आँखों से ओझल न हो गई।

मुश्किल से दो घण्टे गुजरे होंगे। वह अपने हिस्से की पटरी 'चेक' करने में लगा हुआ था। उसने दूर से ही इक्यावन नम्बर चौकी के आदमी को अपनी ओर आते देखा। कंधे पर कोई थैला-सा लटका था। चेहरा बड़ा उदास गमगीन था। पचास नम्बर वाला समझ गया कि जरूर कोई न कोई गड़बड़ी हुई है। वह उसके सामने चल पड़ा। मिलते ही पूछा, 'क्यों भई ! इतने हताश क्यों हो ?'

'बात ही ऐसी बन गई। साले ने इतना जोर का चांटा मारा कि देखो न! चेहरे पर पाँचों अंगुलियों के निशान पड़ गए।'

'पर हुआ क्या, क्या साहब ने मारा था?'

'हाँ, उसी ने।'

'क्यों? क्या तुमने अपनी चौकी को ठीक न कर रखा था? साहब के आने की सूचना तो मैंने तुम्हें दे रखी थी।'

'अरे! चौकी तो ठीक-ठीक थी, वो क्या हुआ कि साहब जब वापस रवाना होने लगा तो मैंने उससे छोटे साहब की शिकायत कर डाली।'

'क्यों, छोटे साहब ने क्या किया?'

'पिछली बार जब वो आया, तो उसने चौकी के बाहर सब्जी उगी हुई देख ली और यह कहकर जुर्माना लगा दिया कि उसने बिना इजाजत के सरकारी जमीन पर सब्जी उगाई है। पहले तो साहब कुछ न बोला, पर जब मैंने अपना जुर्माना लौटाने पर जोर दिया तो सीधा बरस पड़ा मुझ पर। मेरे गाल पर एक सपाट चाँटा मारा। सिपाही का सैल्यूट और साहब का चाँटा दोनों वजनदार होते हैं। कहने लगा, एक तो गलती की और ऊपर से शिकायत! मुझे तो फिक्र है कल आने वाले बड़े साहब की व्यवस्था की और तुम अपना रोना रो रहे हो।'

'ये तो वास्तव में बुरा हुआ। आखिर बिना मौके कही हुई बात का अन्जाम बुरा ही होता है। तुम्हें कहने से पहले सोचना चाहिए था।'

'सोचना क्या चाहिए था। उसने मुझे चाँटा मारा है अगर उसे मुअत्तल न करा दूँ तो मेरा भी नाम नहीं।' यह कहकर वह गुस्से में आगे बढ़ चला।

पचास नम्बर चौकी वाले ने उसे रोकने का बहुत प्रयास किया, मगर उसने एक न सुनी। उसे विश्वास था वह मुख्यालय पहुँचकर अपना काम करवा लेगा।

चौकी नम्बर इक्यावन वाले को शहर गये आज पूरे तीन दिन हो चुके थे, पर वह न लौटा तो न ही लौटा। बेचारी उसकी पत्नी रात-दिन उसकी इंतजारी में बैठी रोती रहती है। उसका काम तो वह निपटा दिया करता था, पर तीन दिन तक पति का वापस न लौटना, उसके लिए चिंता का कारण बन गया था।

पचास नम्बर चौकी वाला भी इस बात से चिंतित था। उसकी पत्नी का दुखड़ा उससे देखा नहीं जा रहा था। आखिर वह आश्वासन देने के अलावा कर भी क्या सकता था। इक्यावन नम्बर वाले के घर में जलाने की लकड़ी खत्म हो चुकी थी, सो वह उसके लिए लकड़ी लाने के लिए जंगल में गया। नदियों के पास वह बांसों के झुरमुट के बीच सूखी लकड़ियाँ बीन रहा था। हठात् उसे कहीं से खट-खट की आवाज सुनाई दी। वह चौंका, झुरमुट से बाहर आया तो उसने देखा कि नदिया पर बने पुल पर इक्यावन नम्बर चौकी वाला पटरी को खोल रहा है। यह देख, वह दंग रह गया। यह वो क्या कर रहा है, उसने पटरी क्यों खोली है, कहीं उसकी नीयत..........।

उसने सिर पर रखे लकड़ियों के गट्ठर को जमीन पर फेंका। और सीधा भागा पटरी की ओर। इक्यावन नम्बर वाले ने उसे देख लिया था। पटरी दो हिस्सों में बंट चुकी थी। वह जो चाहता था पूरा हो चुका था। उसने झट से सब्बल और चाबी हवा में दूर उछाल दी, जो सीधी नदी में जा पड़ी।

चौकी नम्बर पचास वाले के चेहरे का रंग उड़ गया। उसे अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ। डाँटते हुए चिल्लाया, 'यह क्या किया है तूने। क्या तुम्हें पता नहीं, कुछ ही देर में यहाँ से गाड़ी गुजरने वाली है?'

'गुजरने दो। इसीलिए तो मैंने पटरी खोली है। गाड़ी गिरेगी। अपने आप सबको सबक मिल जाएगा।'

'क्या खाक सबक मिल जाएगा? तुम्हें पड़ी है अपनी शिकायत और सबक की, भले मानुष! जरा यह तो सोचो कि दुर्घटना घटेगी तो गाड़ी सीधी पुलिया को चीरती हुई नदी में जा गिरेगी। सैकड़ों जानें चली जाएँगी। क्यों इतने बड़े पाप को अपने सिर पर चढ़ा रहे हो?'

अगर यह पाप है, तो मेरे गाल पर पड़ा चाँटा क्या तुम पुण्य कहोगे! जा-जा अपना रास्ता नाप। आया है बड़ा भारी पाप-पुण्य की बातें हांकने वाला।

पचास नम्बर वाला अब बातों में अपना समय बेकार करना समझ रहा था। वह सरपट अपनी चौकी की ओर दौड़ा, ताकि वहाँ से सब्बल और चाबी लाकर पटरी को पस जोड़ सके। वह इतने रफ्तार से दौड़ रहा था कि उसका

साँस फूलने लगा। दौड़ते-दौड़ते उसके पाँव थक चुके थे। शरीर का सारा तनाव छाती पर जमा होता चला जा रहा था। वह जानता था कि अगर उसने दो मिनट भी विश्राम के लिए अपने कदमों को रोका तो यह देर कितनी खतरनाक साबित होगी। उसने दौड़ते-दौड़ते आसमान की ओर नजर दौड़ाई और लगा मन-ही-मन भगवान से दुआ माँगने, शक्ति दो भगवान मेरे ! मुझे शक्ति दो।

अभी वह मुश्किल से चार फर्लांग ही पार कर पाया था कि दूर से कारखाने के भोंपू की आवाज सुनाई दी। उसके होश उड़ गए। भोंपू बजा, इसका मतलब पाँच बज गए हैं। और गाड़ी का यहाँ से गुजरने का समय पाँच तीन (५.०३ बजे) है। इतने कम समय में न तो मैं चौकी तक पहुँच सकता हूँ और न ही पटरी जुड़ सकती है। तब क्या किया जाए ? हे भगवान ! एक आदमी की बेवकूफी का अंजाम क्या ऐसे बुरे हादसे में बदलेगा ! उसे आँखों के सामने ऐसे लगने लगा मानो रेल आ चुकी है, पुल पर एक्सीडेंट हो गया है। लोग चिल्ला रहे हैं—बचाओ-बचाओ। बच्चों की चीखें सुनाई दे रही हैं।

इस प्रकार के भयावह दृश्य की कल्पना से उसका रोम-रोम सिहर उठा। वह चिल्ला पड़ा, 'नहीं-नहीं', ऐसा कभी नहीं होगा। मैं ऐसा कभी नहीं होने दूँगा।

पर……पर कैसे ? न मेरे पास झण्डी है और न ही बदन पर कोई लाल कपड़ा, जिससे गाड़ी को रोकने का सिगनल किया जा सके।

वह इसी उधेड़-बुन में फंसा था कि उसे दूर से रेलगाड़ी की सीटी हल्की सी सुनाई दी। उसका जमीर उसे गवाही नहीं

दे रहा था कि उसके रहते यह सब कुछ हो जाए। आखिर उसने प्रण कर लिया कि वह अपनी जान देकर भी इस बुरे हादसे को टालेगा।

तभी पटरी के किनारे पड़ी 'फिश प्लेट' पर उसकी निगाह पड़ी। उसने उसे तुरन्त उठा लिया और उसका नुकीला छोर अपनी दाहिनी जंघा पर दे मारा। खून का फव्वारा छूट पड़ा। उसने तुरन्त अपना अंगोछा अपने ही गर्म खून में भिगोया। सारा कपड़ा चन्द क्षणों में ही लहू से तर-बतर हो गया।

उसने सामने नजर उठाई, गाड़ी बढ़ी चली आ रही थी। झट से उसने अपना हाथ आसमान की ओर उठा दिया और यूँ लाल झण्डी हवा में लहराने लगी।

गाड़ी बदस्तूर आगे बढ़ी चली आ रही थी। उसके और गाड़ी के बीच का फासला भी सिमटता चला जा रहा था।

उसके शरीर से इतना खून बहा चला जा रहा था कि अपने आपको सम्भालना अब उसके लिए मुश्किल हो गया। आँखों के सामने घुप्प अंधकार छाने लगा। उसे पता भी न चला कि कब वह पटरी पर गिरा। उसके हाथ से लाल कपड़ा छूट गया। कपड़ा नीचे गिरे उससे पहले तो उसे किसी दूसरे हाथ ने थाम लिया।

इस बीच गाड़ी रुक गई। जब सबको ज्ञात हुआ कि आगे पटरी खुली पड़ी है और किसी ने अपनी जान की बाजी

लगाकर भी हादसे को रोका है, तो सैकड़ों जुबानें भीगे नयनों से 'धन्यवाद-धन्यवाद' कहने लग गईं।

जब अस्पताल में चौकी नम्बर पचास वाले को होश आया तो उसने छूटते ही पूछा, 'ट्रेन का क्या हुआ ?'

किसी ने जवाब दिया, 'तुम्हारी बदौलत बला टल गई।'

'मगर वह दूसरा हाथ किसका था ?'

'चौकी नम्बर वाले इक्यावन का।'

'क्या ? चौकी नम्बर इक्यावन वाले का ?' वह चौंक पड़ा।

पोस्टमार्टम

चेयरमैन साहब आज सुबह से ही कुछ परेशान-से नजर आ रहे थे। इस समय भी रात के बारह बज चुके थे, पर वे अब भी स्वयं को संतुलित न कर पाये। दिमागी उधेड़-बुन में ही न जाने कब उनका हाथ बैड-स्विच पर चला गया और कमरे की बत्ती बार-बार ऑन-ऑफ होने लगी। उनका अपनी इस बचकानी हरकत पर ध्यान तब गया, जब चौकीदार ने दरवाजे पर दस्तक दी।

'खट्–खट्–खट्....'

'अं....हाँ, कौन है बे ?'

'रामदीन, बाबू जी ! हुजूर माफ़ करें, आपके कमरे की बत्ती बार-बार जगते-बुझते देखकर मैं किसी गलतफहमी का शिकार हो गया था।'

'ओह, ठीक है–ठीक है, तू जा अपना काम कर।'

आखिर वह पूरी रात करवटों में ही कट गयी। 'क्या होगा, कैसे होगा ? क्या पुलिस कप्तान और डॉक्टर, दोनों साथ देंगे ?'

वाकई चेयरमैन साहब अपने बेटे की हरकत से बड़े पशोपेश में पड़ गए थे। सुबह हुई तो चेयरमैन साहब फटाफट तैयार होकर डॉक्टर के घर की तरफ चल दिए।

हालांकि डॉक्टर उस समय निजी क्लीनिक में किसी मरीज की पड़ताल कर रहा था। चेयरमैन साहब सीधे ही क्लीनिक में दाखिल हो गये। वैसे डॉक्टर को चेयरमैन साहब का ऐसे कैबिन में बिना सूचना या आहट के सीधे ही घुस आना अच्छा तो न लगा, पर फिर भी स्वागत करते हुए बोले– 'आइये....आइये चेयरमैन साहब, तो आखिर आज आप गरीबखाने में तशरीफ ले ही आये।' डॉक्टर मरीज को उठने का इशारा करते हुए कैबिन से बाहर निकल आया। मरीज ने दवा का पर्चा संभाला और चला गया।

'सॉरी सर, बैठिये' सामने पड़ी कुर्सी की तरफ इशारा करते हुए डॉक्टर ने कहा। शायद मरीज की जांच-पड़ताल के समय चेयरमैन साहब को मिनट भर जो खड़ा रहना पड़ा था, डॉक्टर उसी के लिए खेद प्रकट कर रहा था।

चेयरमैन साहब ने कुर्सी पर बैठने से पहले उसे थोड़ा आगे खिसका लिया, ताकि करीब से बातें हो सकें।

'अच्छा डॉक्टर ! बाकी बातें छोड़ो। कुछ काम की बात करें।'

'क्या मतलब ?'

'मतलब-वतलब कुछ नहीं। मेरे बेटे को तो तुम जानते ही हो, उसने आज फिर एक नई मुसीबत खड़ी कर दी है।' क्या फिर किसी लड़की-वड़की का ? 'अरे नहीं भाई, वो सब तो जवानी में चलता ही रहता है। दरअसल बात यह है कि उससे कल एक एक्सीडेंट हो गया, रेड फोर्ट चौराहे पर।'

'फिर ?'

'कुछ नहीं, एक्सीडेंट से मरने वाला किसी दूर-दराज के गांव का लगता है, फिर भी सुधार समिति वालों ने बेवजह का पोंगा खड़ा कर दिया है। लाश तुम्हारे पास लाने वाले हैं, पोस्टमार्टम के लिए।'

'ओह, तो यह बात है!' चेयरमैन साहब माफ करें, पब्लिक का मामला है, मैं आपकी मंशा और परेशानी समझते हुए भी कुछ नहीं कर पाऊँगा।' डॉक्टर सिर के बाल खुजलाते हुए बोला।

अभी डॉक्टर ने अपनी बात कह के खत्म की थी कि हॉस्पिटल से कॉल आ गई, इमरजेंसी-कॉल।

डॉक्टर समझ गया, पोस्टमार्टम के लिए जाना होगा। चपरासी को यह कहकर उसने विदा कर दिया कि वह दो मिनट बाद पहुँच रहा है, सुपरिन्टेंडेंट साहब से बता दिया जाए।

....बड़ी गर्मा-गर्मी के बाद आखिर डॉक्टर लाइन पर आ गया। चेयरमैन साहब ने 'डेढ़ लाख रुपये' और 'प्रोमोशन' का तुर्रा छोड़कर सौदा पटा लिया था।

रवाना होने के वक्त फियेट में बैठे चेयरमैन साहब के चेहरे की मुस्कान यह बता रही थी कि उन्होंने आखिर बिगड़ी बना ही ली। अब उन्हें कोई फिक्र नहीं है।

पुलिस कप्तान से तो फोन पर ही सौदा पट गया था, इसलिए जब उन्होंने देखा कि अस्पताल में लाश के साथ वह खुद पहुंचा हुआ है, तो वे और भी निश्चिन्त हो गए। अब तो

फियेट सरपट चेयरमैन की कोठी की ओर दौड़े जा रही थी और 'सुधार समिति' वालों के इन्कलाबी नारे काफी पीछे अस्पताल के बाहर ही छूट गए थे ।

डॉक्टर अब तक अपने चैम्बर में पहुंच चुका था। चेयरमैन से हुए सौदे के मुताबिक उसने अपने किसी जूनियर को साथ में नहीं लिया और 'पोस्टमार्टम रूम' की ओर बढ़ गया ।

आखिर लाश के ऊपर से कपड़ा उठाया गया। डॉक्टर एकाएक सकते में आ गया। यद्यपि चेहरा खून से तर-ब-तर था, फिर भी वह लाश को पहचान चुका था। वह उन्हीं हैडमास्टर साहब की लाश थी, जिनसे वह कभी अ-आ-इ-ई पढ़े थे। उनका ही तो कहना था कि मैं एक बड़ा डॉक्टर बनूंगा। डॉक्टर एक बारगी अपने अतीत में चला गया और उसे प्राइमरी की पढ़ाई के अपने बीते दिन चलचित्र की भांति एक के बाद एक याद आने लगे। शायद वह पोस्टमार्टम रूम में अपने होने का अहसास इतनी जल्दी न पाता यदि उसका सहायक उसे पोस्टमार्टम के लिए ट्रे से औजार निकालकर न पकड़ाता ।

डॉक्टर ने पोस्टमार्टम का काम पूरा निपटा दिया था और अपने चैम्बर में बैठा रिपोर्ट बना रहा था। उसने उच्चाधिकारियों को रिपोर्ट भिजवा दी ।

डॉक्टर लंच के वक्त भोजन के लिए घर पहुंचा, तो पत्नी ने सूचना दी—'अभी-अभी सी० एम० ओ० साहब का फोन आया था। उन्होंने आपको अर्जेन्ट कॉल किया है। थोड़ा

सहमकर डॉक्टर ने पत्नी की बात सुनी और गहरी सांस छोड़ते हुए खाना लगाने को कहा। जब तक भोजन टेबल पर आया, तब तक डॉक्टर ने अपने लैटर पैड पर आनन-फानन में कुछ लिखा और सी० एम० ओ० साहब के बंगले की ओर रवाना हो गया।

सी० एम० ओ० के लॉन में ही डॉक्टर का आमना-सामना चेयरमैन से हो गया। चेयरमैन साहब ने डॉक्टर को घूरा, कहने लगे, डॉक्टर! तेरी ये मजाल! मैं भी देख लूँगा तुम्हें। तुमसे तो सी० एम० ओ० अच्छे।

डॉक्टर बगैर कोई जवाब दिये आगे बढ़ गया। मानो उसने कुछ सुना ही न हो। वह इतना अवश्य समझ गया था कि चेयरमैन साहब को रिपोर्ट की जानकारी मिल चुकी है।

सी० एम० ओ० साहब जैसे डॉक्टर से मिलने को बेताब थे। उसके आने की सूचना पाते ही वे स्वयं ड्राइंग-रूम में आ गये। डॉक्टर के कुछ कहने से पहले ही बोले—'शायद आप समझ गए होंगे, मैंने आपको क्यों बुलाया है?'

डॉक्टर ने केवल हाँ में गर्दन हिलाई और साथ लाया पत्र उनके हाथों में थमा दिया। सी० एम० ओ० उसे पढ़ झल्ला उठे—'यह क्या?' 'कंडीशनल रिजाइन?' आप जानते हैं 'एक लावारिस आदमी की लाश के पीछे आप अपना अच्छा-खासा भविष्य दाँव पर लगा रहे हैं।'

'जी हाँ, जिसे आप लावारिस कह रहे हैं, उसका वारिस मैं हूँ।'

सी० एम० ओ० चौंके, 'क्या मतलब ?' 'वे मेरे पिता तुल्य हैं, मास्साव ।'

'मतलब, तुम्हारे शिक्षक ?'

'जी हाँ !'

सी० एम० ओ० हतप्रभ हो डॉक्टर के संवेदनशील चेहरे पर मानों कुछ पढ़ने की कोशिश कर रहे थे। इसी बीच चेयरमैन, पुलिस कप्तान के साथ अपनी फियेट में वहां आ धमके। उनके आते ही डॉक्टर वहां से चुपचाप निकल पड़े। अचानक सी० एम० ओ० के हाथ से डॉक्टर का इस्तीफा नीचे गिर चुका था और वे एकाएक चेयरमैन साहब की तरफ मुखातिब हो पशोपेश में इतना ही कह पाये—'सॉरी, वी कांट हैल्प यू सर !'

बेचारा

रिंग मैन अपने कमरे में दाखिल हुआ और सोफे पर धम्म से जा बैठा। उसके चेहरे से अन्दाज लगाया जा सकता था कि वह कितना थक चुका है। उसने सिर से अपना टोप उतारा। एक लम्बी सांस छोड़ते हुए उसने पंखा चालू कर दिया। हवा से उसे कुछ राहत मिली। पसीना सूखने लगा। प्यास उसे इतनी महसूस हो रही थी कि वह एक ही सांस में दो गिलास पानी पी गया।

वह इतमीनान से आँखें मूंदे सोफे पर बैठा रहा। उसे खुशी थी कि आज उसका 'शो' सफल रहा और शानदार भी। वह मन-ही-मन गुनगुनाने लगा। इसी बीच किसी ने उसके द्वार पर दस्तक दी। उसने देखा कि कोई महिला एक बच्चे के साथ उसके बारे में पूछती हुई उसके कमरे में आ गई।

रिंग मैन ने अपने दरवाजे पर अनजान महिला को देख पूछा 'कौन हो तुम ? किससे मिलना चाहती हो ?'

महिला के शरीर पर मैला साधारण सा कपड़ा लिपटा था। उसकी हालत को देखकर रिंग मैन यह तो समझ चुका था कि यह कोई गरीब जरूरतमंद है। महिला ने हाथ जोड़ते हुए कहा, 'मालिक ! मैं असहाय हूँ। मेरा पति मर चुका है। मेरे पेट में बच्चा है। अभी हम दो प्राणी हैं। एक मैं और एक यह मेरा बेटा।' उसने अपने बेटे की ओर इशारा करते हुए कहा।

महिला की आवाज में बड़ी गिड़गिड़ाहट थी । कहने लगी 'मैं जैसे-तैसे मेहनत करके अपना और अपने इस बेटे का पेट भर पालने का इंतजाम कर पाती हूं, पर अब मुझसे यह न हो सकेगा । मैं पूरे महीने हूं ।'

रिंग मैन ने अपनी आँखें तरेरते हुए कहा, 'तो इसमें मैं क्या करूं ? बच्चे को किसी ढाबे पर नौकरी लगा दो । तुम्हारा न सही, अपना तो पेट भर ही लेगा ।'

'लगाना चाहा पर इतने छोटे को रखने के लिए कोई तैयार नहीं है । मालिक ! आप सर्कस चलाते हैं । पचासों लोग आपके यहां काम करते हैं । मेहरबानी होगी, इसे भी आप अपने यहां रख लें । इसे भी कुछ सिखा दें । कल अपने पाँव पर खड़ा हो जाएगा, माँ को इसी में खुशी है ।'

रिंग मैन ने बच्चे को घूरते हुए देखा । कहने लगा, 'अच्छा देखते हैं, यह सर्कस के काम का है या नहीं ।'

रिंग मैन ने बच्चे को अपने पास बुलाया । एक हाथ से उसे उठाया तो लड़का बड़ा हल्का-फुल्का लगा । उसने बच्चे की कमर अपने घुटने पर रखी और पीठ के बल ऐसे मोड़ दिया जैसे वह बालक नहीं वरन् लकड़ी की कोई बेंत हो ।

माँ तो सकपका गई । बच्चे के मुँह से जोर से चीख निकली । उसे इतना दर्द हुआ, मानो उसे मोड़ा न गया हो बल्कि तोड़ा गया हो । महिला उसे छुड़ाने के लिए आगे लपकी ही थी कि रिंग मैन ने उसे अपने घुटनों के बीच से छोड़ दिया । लड़के के मुँह से हिचकियां अभी भी निकल रही थीं । वह सीधा अपनी माँ के पास भागा और उसके लहंगे में अपना मुँह

छिपाकर रोने लगा। महिला की साँस में साँस आई। उसने बच्चे को समझाया, 'बेटा! ये साहब कुछ कर थोड़े ही रहे हैं। ये तो बस ऐसे ही तुम्हें देख रहे थे, पड़ताल कर रहे थे। ना-ना, अँ,........अच्छे बेटे नहीं रोते।' और बच्चा चुप हो गया माँ के प्यार से, रिंग मैन के डर से।

रिंग मैन ने स्वीकृति में अपना सिर हिलाया। कहा, 'ठीक है, तुम इतना कहती हो तो मैं बच्चे को रख लूंगा। इसे कलाबाजियां सिखलाऊंगा। वैसे बड़ा लचकीला है तेरा छोकरा, सचमुच सर्कस के काम का।'

महिला ने रिंग मैन को धन्यवाद दिया और कहकर लौट गई कि वह कल तक बच्चे को उस तक पहुँचा देगी।

महिला को रिंग मैन उदारमना आदमी न लगा, पर यह सोचकर उसने अपने बच्चे को सौंपने का मन बना लिया कि अगर उसने इसे कुछ सिखाया तो बुढ़ापे में मेरा भी कोई सहारा हो जाएगा।

अगले दिन लड़का रिंग मैन के पास था। रिंग मैन इतना सख्त था कि लड़का डर के मारे अपनी माँ से एक शब्द भी न बोल पाया। माँ ने उसका सिर चूमा। उसकी आँखें भीग आईं। अपने दिल को कठोर करते हुए उसने मासूम बच्चे को रिंग मैन के हवाले कर दिया।

इस शहर में सर्कस के पूरे कार्यक्रम हो चुके थे। इसलिए सब लोग कहीं और जाने के लिये अपना-अपना सामान बटोरने-संवारने लगे। लड़का सब-कुछ देखता रहा। कुछ दिनों के सफर में वह सबसे घुलमिल गया। उसे नाचते-झूमते

जोकर बड़े अच्छे लगे। कई कलाबाजियां उसके मन को बहुत भाईं। आखिर उसे भी तो यह सब सीखने थे। रिंग मैन ने मुहूर्त किया और लड़का उसके इशारों पर कलाबाजियां सीखने लगा। उसे कला सीखनी तो अच्छी लगती थी, पर रिंग मैन की सख्ताई उसे रास न आई। जब देखो तब वह उसे डांटता-डपटता रहता। एक-दो बार समझाने के बाद अगर गलती हो जाती, तो रिंग मैन का घूँसा भी आ पड़ता।

खैर जो भी हो। आज उसने कई कलाओं में अपनी पहुँच बना ली थी। एड़ी को सिर पर लगाना, आग से जलते 'रिंग' को पार करना, रस्सी पर ही लटक कर कलाबाजियां खाना, हवा में छलांग भरी उड़ान लगाना ऐसे कितने ही हूनर थे, जिसे रिंग मैन ने उसे सिखाया था।

आज उनका सर्कस शहर के सबसे बड़े मैदान में था। लम्बे-चौड़े तम्बू लगे थे। शहर में चारों तरफ सर्कस के चर्चे थे। लोगों की भीड़ सर्कस देखने के लिए जमा होने लगी। स्कूली बच्चों की बसें भी आई थीं। ठीक समय पर सर्कस चालू हो गया। पांडाल में रंग-बिरंगी रोशनियाँ जगमगा उठीं। सबसे पहले जोकर आए और अपनी चहल-कदमी और हरकतों से, लगे लोगों को हँसाने। उसके बाद लड़कियों ने आकर कई करतब दिखाए, फिर प्राणाहारी जानवरों ने अपनी कलाबाजियों से दर्शकों का मनोरंजन किया।

सभी लोग हर करतब पर वाह-वाह करने लग जाते। कार्यक्रम के बीच-बीच में एक ऐसे करतब की घोषणा की जाती रही, जिसे सर्कस का सबसे बड़ा करतब कहा गय
वह करतब था उसी नन्हें कलाबाज लड़के का। सबक

बेसब्री से इन्तजार था। आखिर अचानक रोशनियाँ धीमी पड़ीं। लोग इसका कारण समझ पाये, तब तक तो पांडाल वापस रोशनी से जगमगा उठा। रोशनी तो पहले से भी तेज थी। लोगों ने पाया कि रिंग के बीचो-बीच रिंग मैन और उसके साथ एक छोटा-सा बच्चा सबका अभिवादन कर रहे थे। सभी लोगों का ध्यान बच्चे की ओर बँधा-खिंचा चला गया।

क्या यही वह बच्चा है जो इस सर्कस का सबसे बड़ा करतब है। सबको सुनाई दिया, "अब आपके सामने पेश है वह अजूबा करतब।"

बच्चे ने झट से हवा में झूलती हुई रस्सी को पकड़ा और लगा अपने करतब दिखाने। सबसे पहला करतब था, पीठ के बल रस्सी पर लटकना। उसने बड़ी सफाई से अपनी कला दिखाई और दर्शकों तक एक हवाई चुम्बन भेज दिया। पूरा पांडाल तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा। बाँस पर एक पाँव के बल खड़े होना, रस्सी पर हाथ के बल चलना, शेर के मुँह में अपना सिर डालना, एक हाथ पर खड़े होना और दूसरे हाथ से गेंद खेलना जैसे करतव देखकर सारे गद्गद् हो उठे।

यह उसका आखिरी करतब था, किन्तु सबसे कठिन। जमीन से पच्चीस फीट ऊँची हवा में कलाबाजियां खाना। जैसे ही उसने यह करतब शुरू किया, लोगों का दिल काँप उठा, यह सोचकर कि कहीं कुछ हो गया तो! अचानक सबने पाया कि रस्सो टूट गई और हवा में कोई रिंग की तरह गोल घूमता आ जमीन पर धम्म से जा गिरा।

सब लोग हक्के-बक्के रह गए। सबकी एक ही आवाज थी, "क्या हुआ, क्या हुआ ?" कोई चिल्लाया कहीं वह लड़का तो नहीं गिर गया है ?

सबने देखा रिंग पर जोकर और नौकर दौड़ भाग कर रहे हैं। कोई डॉक्टर को बुलाने के लिए चिल्ला रहा है। कुछ लोग भीतर से आए और वापस पर्दे के भीतर चले गए। रोशनी फिर जगमगा उठी। बैंड की धुन बज उठी और इसी के बीच सर्कस समाप्त होने की आवाज सुनाई दी।

अगले दिन अखबारों में सर्कस के विज्ञापन तो थे, मगर कलाबाजों में उस लड़के का नाम न था, जो सर्कस का अजूबा करतब था।

किसी ने अखबार पढ़ते-पढ़ते चाय की प्याली मेज पर रखी। उसका दिल भर आया। गहरी साँस छोड़ने पर सिर्फ इतना ही कह पाया, 'बेचारा...........!'

इन्साफ

उस वर्ष बारिश बहुत तेज बरसी थी। बेचारे उस गरीब का तो मकान ही ढह गया था। खेती-बाड़ी ही उसकी कमाई का साधन था। जमीन के नाम पर रही होगी यही कोई डेढ़-दो बीघा। वर्षों खेती-बाड़ी करने के बाद भी उसके पास नकद-बचत ना के बराबर थी। आदमी कितना भी गरीब क्यों न हो, वह भूखे रहने और ठिठुरती ठण्ड में नंगे आसमान के नीचे सोने की कामना कभी न करेगा।

किसान ने खेत की कुछ जमीन बेची, थोड़ा पड़ौसी से कर्ज लिया और नया मकान बनाया। मकान यों तो पूरा बन चुका था, पर छत डलनी अभी बाकी थी। किसान के पैसे खूट गये। बिना पैसे के छत तो क्या, छाता भी नहीं बनता। मकान का छाता तो छत ही है। बिना छत के मकान, मकान नहीं, बस चारदीवारी कहलाएगा। आखिर उसने निर्णय किया कि नयी उपज तक छत कच्ची ही बनवा ली जाये।

किसान ने कारीगर से कहा, 'पैसे की कमी होने के कारण तुम सरकण्डे बिछाकर ऊपर मिट्टी डाल दो। फसल पकने पर मैं नयी छत बनवा लूँगा।'

कारीगर को वैसा करने में ऐतराज भी कहां था। उसने सरकण्डों की छाज बनायी और माटी डालकर गारे से उसे लीप दिया।

मकान कच्चा-पक्का/बना-अधबना जैसा भी था, किसान उसमें रहने लग गया। राह गुजरते एक व्यक्ति ने यह सब देखा

और उसने तत्काल एक योजना बना ली। वह रात के अन्धेरे में किसान की छत पर चढ़ गया। जैसे ही उसने पहला कदम रखा। सरकण्डे बिखर गये और वह नीचे गिर पड़ा। किसान उस छत के नीचे ही सोया हुआ था। चोर सीधा किसान पर ही जाकर गिरा।

किसान की नींद टूट गयी और वह हड़बड़ाकर जाग उठा। उसने देखा कि कोई चोर घर में चोरी करने घुसा है। उसने चोर को पकड़ने की चेष्टा की, मगर अन्धेरे का फायदा उठाकर चोर भाग निकला।

अगले दिन, चोर बादशाह के दरबार में पहुँचा। उसने न्याय का घण्टा बजाया। बादशाह ने पूछा, "तुम्हें क्या शिकायत है ?"

'हुजूरे महान् ! गुनाह माफ हो। कल मैं एक किसान के घर चोरी करने गया। मैं उसकी छत पर चढ़ा, पर उस धूर्त ने छत की जगह सरकण्डे बिछा रखे थे। मैं नीचे गिर पड़ा। मेरे हाथ-पाँव टूटते-टूटते बचे। मेरी आपसे दुहाई है कि आप उस ठग को सजा देकर इन्साफ करें।'

बादशाह ने किसान को बुलवाया और पूछा, 'क्या यह सच है कि रात को यह आदमी तुम्हारी छत से नीचे गिर पड़ा ?'

'जी, यह सच है। यह तो गनीमत समझिये कि यह चोर मेरे ऊपर ही गिरा, वरना इसकी हड्डियाँ टूट जातीं।'

बादशाह ने आगे कुछ सुनने की जरूरत न समझी। बादशाह ने कहा, 'अगर यह सच है, तो किसान को फांसी पर चढ़ा दिया जाये।'

चोर की इल्तिजा और बादशाह का हुक्म ! गरीब किसान घबराया और लगा गिड़गिड़ाने, 'हुजूर ! कसूर तो चोर का है । मुझ पर रहम करें ।'

'चुप ! यह मेरा हुक्म है ।'

'पर हुजूर ! आप चोर को सजा न देकर मुझ गरीब पर बेरहमी कर रहे हैं ।'

'तुम्हारी यह हिम्मत कि बादशाह के सामने जबान चलाये !'

किसान समझ चुका था कि बादशाह बुद्धू-बेवकूफ है । उससे इंसाफ की उम्मीद करनी बेकार है । उसने रास्ता निकाला, 'हुजूर ! मकान मेरा है, पर छत तो कारीगर ने बनायी थी । लगता है, उसने कमजोर सरकंडों की छत बिछायी थी । इसलिए कसूर कारीगर का है ।'

बादशाह ने जल्लादों को हुक्म दिया, 'तब फिर किसान को छोड़ दो और कारीगर को फांसी पर चढ़ा दो । इस मामले में असली कसूर कारीगर का ही है ।'

कारीगर ने खुद को फंसा देख कहा, 'महाराज ! इसमें मेरा दोष क्या है ? सरकंडे लगाने वाले ने पतले-कमजोर सरकंडे लगाये । दोष तो उसका है ।'

सरकंडे वाले ने सफाई दी, 'जहांपनाह ! दरअसल मैं मजबूत सरकंडे लगाने का हिमायती हूं । पर आजकल सरकंडे बड़े पतले आ रहे हैं । आखिर मजबूत हो भी तो कैसे ! अच्छे सरकंडे तो चोर चोरी करके ले जाते हैं । बेहतर होगा, आप इस चोर को ही दण्ड दें, ताकि फिर कोई छत न गिरे ।'

बादशाह को इस बात में दम लगा। उसने कहा, 'तुम ठीक कहते हो, सरकण्डे ! वास्तव में सारा कसूर तो चोर का है। फांसी पर वही लटकाया जाना चाहिये।'

चोर को फांसी के तख्ते पर लाया गया। पर काफी कोशिशों के बावजूद उसे फांसी न दी जा सकी। कारण, फांसी का तख्ता नीचा था और चोर का कद ऊँचा। उसके गले में कई बार फंदा डाला गया, पर हर बार उसके पाँव जमीन से सटे रहे।

यह नजारा देख बादशाह चिल्लाये, 'किनारे हटाओ इस लम्बू को। किसी ऐसे आदमी को पकड़ लाओ, जिसका कद छोटा हो।'

जल्लाद एक मेहनतकश लोहार को पकड़ लाये। उसका कद फांसी के तख्ते से छोटा था। जब उसे फांसी पर चढ़ाया जाने लगा, वह सकपका उठा। बिना अपराध के फांसी—न कभी देखी, न सुनी। उसने जल्लादों से पूछा, मुझे फांसी पर क्यों चढ़ाया जा रहा है ?

'क्योंकि तुम नाटे हो।' एक जल्लाद ने जबाब दिया।

उसने बादशाह से इल्तिजा की—'यह भी क्या खूब है दानिशमन्द बादशाह ! मैं नाटा हूँ, इसलिए मुझे फांसी दी जा रही है। नाटा होना कौन-सा अपराध है ? कद तो आपका भी छोटा ही है।'

बादशाह कुछ सोचने लगे। लोहार ने फिर अपनी बात दोहराई, 'हुजूर ! मैं कसूरवार नहीं हूँ। मैं तो आपके महलों के लिए लोहा तैयार करता हूँ। मुझ गरीब पर....।'

बादशाह झल्ला उठे। बोले, 'अरे बेवकूफ ! हमें क्या मालूम कि तुम्हारा कसूर है या नहीं ! हमने फांसी का हुक्म

दे दिया है। इसलिए हमें तो किसी एक आदमी को फांसी पर चढ़वाना है। फांसी तो देनी थी चोर को, पर वह बहुत लम्बा है, तख्ते से भी लम्बा।'

'अगर चोर का कद लम्बा है, तो फांसी के नीचे जमीन खुदवाई जा सकती है।' लोहार ने अपना बचाव करते हुए कहा।

बादशाह मुस्कुराये। कहने लगे, 'तुम्हें धन्यवाद! तुमने मामला सुलझा दिया।'

जल्लादों! देखते क्या हो मेरी तरफ! चोर को चढ़ा दो फांसी पर और गड्ढा खोद दो उसके पाँवों के नीचे। गरम मिजाज में बादशाह चिल्लाये।

जल्लाद गड्ढा खोदने के लिए फटाफट जुट गये। अभी शुभारम्भ किया ही था कि चोर चिल्लाने लगा, अरे, जल्दी करो, जल्दी। कहीं देर हो गई तो ये मौका दुबारा न मिलने वाला। भारी नुकसान उठाना पड़ेगा मुझे।

चोर की बात से सबको आश्चर्य हुआ। यहाँ तो सभी बचने की चेष्टा कर रहे हैं और यह चोर है, जो मरने के लिए तावड़तोब कर रहा है।

बादशाह ने जब कारण पूछा, तो चोर कहने लगा, 'शहंशाह! अभी-अभी मुझे स्वर्ग से एक सन्देश मिला है कि स्वर्ग के बादशाह की मृत्यु हो गई है। वहाँ का राजसिंहासन खाली है। सभी देवता नये बादशाह की इन्तजारी में बैठे हैं। स्वर्ग के बादशाह ने मरने से पहले कहा था कि मेरे मरने के बाद, धरती से जो मरकर सबसे पहले स्वर्ग में पहुँचे, उसे बादशाह बना दिया जाये। जल्दी का राज यही है राजन्!

आप बातों में मेरा समय बर्बाद न करें और मुझे कृपया तुरन्त फांसी पर चढ़ा दें। थोड़ी देर बाद, आप धरती के राजा होंगे और मैं स्वर्ग का। हा ऽ हा ऽऽ'

बादशाह को चोर से ईर्ष्या होने लगी। बादशाह ने सोचा, मेरे रहते यह दो कौड़ी का आदमी स्वर्ग का बादशाह बने! स्वर्ग का बादशाह बनना महान् सौभाग्य की बात है।

बादशाह ने झट से जल्लादों से कहा, 'रुको। एक मिनट की देर किये बिना चोर को तख्ते से हटाओ और मुझे फौरन फांसी पर चढ़ा दो।'

चोर ने बादशाह की बात का हल्का विरोध जरूर किया, पर बादशाह का हुक्म सर-आँखों पर। बादशाह फांसी के तख्त पर चढ़ चुके थे। अधर में झूल रहा था बादशाह का बदन, फांसी के फन्दे में। चोर ने मन-ही-मन कहा, फांसी के तख्ते का यह कद तुम्हारे ही लिए था। कसूरों की जड़ तो तुम्हीं थे बेवकूफ! माना, सौ नागरिकों की बजाय एक बादशाह की जिंदगी ज्यादा कीमती होती है, पर बेकसूरों को बचाने के लिए एक तो क्या, सौ बादशाहों के भी खिलाफ होना इंसाफ है।

'बेवकूफ अपनी ही बेवकूफी से मरता है'—यह कहते हुए चोर ने गीले कपड़े से अपना मुँह पोंछ लिया। चेहरे का बनावटी रूप हट चुका था। उसका असली चेहरा देखकर एक बार तो सभी चौंक उठे। जल्लाद कुछ समझे, उससे पहले ही लोगों ने उसे अपने कन्धे पर उठा लिया। सभी खुशी से चिल्ला उठे, 'काजी साऽब जिन्दाबाद। इंसाफ-ए-आलम जिन्दाबाद'।

जांबाज

छोटे राजकुमार का महल में बूढ़े लोहार के छोकरे के पास जाकर घन्टों बैठना-बतियाना, राजा को कतई अच्छा न लगता। दो-एक बार उसने राजकुमार को प्यार से समझाया भी कि अपने से छोटे लोगों के साथ उसका मेलजोल ठीक नहीं, पर राजकुमार न माना। जहाँ प्यार से बात न बने, वहाँ पाबंदियाँ लग ही जाती हैं, पर राजकुमार पर जितनी पाबंदियाँ लगीं, लोहार के बेटे से उसकी चोरी-छिपे मुलाकात उतनी ही बढ़ती रही।

राजकुमार को उस युवा लोहार को ठोंका-पीटी करते देखने और उससे बतियाने में बड़ा मजा आता। एक दिन बातों-ही-बातों में उसने छोटे राजकुमार को अपने पिता के साथ राजा के सलूक की सारी घटना कह सुनाई। युवा लोहार ने बताया कि कैसे एक गरीब किसान को दीवार में जिन्दा चिनवाने के लिए महाराज ने उसके पिता को राजमहल में बुलवाया और इस काम के लिए सींखचे बनाने से इन्कार कर देने पर उन्हें तहखाने में कैद कर दिया।

यह सुनकर अपने पिता के लिए छोटे राजकुमार के दिल में नफरत पैदा हो गई। छोटा राजकुमार उस दिन से रोजाना अपनी रानी मां को तरह-तरह से समझाने-बुझाने में लगा रहा कि किसी तरह वह राजा से कहकर उसके लोहार

दोस्त के बूढ़े पिता को कैद से छुड़वा दे। लेकिन रानी भी राजा के किये हुए काम पर कुछ कहना उसके तीखे तेवर का कोपभाजन होना मानती थी। इसलिए उसने छोटे राजकुमार से इस बारे में अपना विचार बदल देने के लिए कहा।

आखिर छोटे राजकुमार और राजकुमारी में इस बात को लेकर कानाफूसी हुई और वे बूढ़े लोहार को कैद से छुड़ाने की जुगत भिड़ाने लगे। राजकुमारी ने छोटे राजकुमार को सलाह दी कि वह दीपावली की रात में 'लोहे का दीपघर' जड़वाने के बहाने अपने दोस्त को महल में ले आये। महीनों पहले ही राजकुमारी ने पास के गांव में 'दीपघर' बनवाने की अपनी इच्छा रानी मां को बतायी और इस काम के लिए अच्छी खासी रकम छोटे राजकुमार के हाथ युवा लोहार को दिलवा दी। राजा-रानी को तो सिर्फ इतना बताया गया था कि पास के गांव में एक पुराने लोहार को यह काम सौंपा गया है। इधर तहखाने में दीपावली के दिन युवा लोहार का वेश बदल कर दीपघर जड़ने के लिए आना भी तय हो गया।

आज दीपावली थी। अमावस्या की घटाटोप अंधकार वाली रात। हाथ को हाथ नहीं सूझता था। नगर में हर ओर दीप जलाने की तैयारियाँ चल रही थीं। चूंकि राजा का आदेश था कि दीपघर जलने से पहले कोई नगरवासी दीप न जलाये।

अचानक राजमहल में हा-हाकार मच गया। असल में उस रात शहर में कोई खूंखार वनमानुष घुस आया और लगा आतंक फैलाने। पता नहीं कितना बलशाली था वह कि लाठी, पत्थर तो क्या तलवार का भी उस पर कोई असर नहीं

होता था। वह सैकड़ों जानें लेता हुआ राजमहल तक पहुँच गया। वहाँ राजकुमारी को अकेली पा उसने उसे जकड़ लिया। वनमानुष शायद उसके रूप पर इतना मुग्ध हो गया था कि जो भी राजकुमारी को उसके चंगुल से छुड़ाने को कोशिश में उसके सामने आता, वह उसे इतनी निर्दयता के साथ फाड़ डालता कि शूरवीरों का भी दिल दहल जाता।

इसी बीच युवा लोहार भी वेश बदलकर 'दीपघर' जड़ने के लिए राजमहल पहुँचा। वहाँ देखा तो माहौल ही कुछ और था। उसे सारा मामला समझते देर न लगी। उसने फटाफट कदम बढ़ाये और उस जगह पहुँचा जहाँ वनमानुष सैनिकों की चीर-फाड़ कर रहा था। युवा लोहार ने वहाँ पहुँचते ही गोलाकार दीपघर इस तरह घुमाकर फेंका कि वनमानुष उसके बीच फंस गया। इस अचानक हुए हमले से उसकी घिग्घी बंध गई थी। जब तक वह संभलता, लोहार का सधा हुआ हथौड़ा उसके सिर पर आ पड़ा। वनमानुष लहूलुहान होकर कराहने लगा। दो, तीन और चार····हथौड़े का एक-बाद-एक दमदार वार वनमानुष का कचूमर निकाल चुका था।

राजा और उसकी विशेष सुरक्षा-टुकड़ी यह सब देखती रही। जिस वनमानुष को कोई विचलित न कर सका, उसे युवा लोहार ने तो ऐसा फंसाया कि वह मुक्त न हो सका। राजा ने तो समझ लिया था कि वह अब राजकुमारी को वनमानुष से मुक्त न करा पायेगा। हालांकि राजकुमारी अब आजाद थी, फिर भी किसी की भी हिम्मत उस दरिंदे के पास जाने की नहीं हो रही थी, वनमानुष के घन्टों तक फैलाये

आतंक से सब घबराये जो थे। युवा लोहार ने बिना किसी झिझक के लपककर राजकुमारी को अपने हाथों में उठा लिया तथा छोटे राजकुमार को सौंपते हुए कहा, 'संभालो दोस्त ! राजकुमारी को अब कोई खतरा नहीं है।'

छोटे राजकुमार की आँखों में आंसू थे—बहिन के लिए भी और अपने साहसी दोस्त के लिए भी। वह अपनी बहिन के गले लग पड़ा, पर वह निढ़ाल-सी थी। राजकुमार ने रानी माँ से कहा, 'लीजिए माँ ! इसे आप संभालिए' और यह कहते हुए वह अपने दोस्त से गले जा लगा—'मुझे अपनी नायाब दोस्ती पर नाज है दोस्त।'

इधर राजा और रानी ने आँखों-ही आंखों में कुछ बात की और उस शूरवीर को पास बुलाकर राजकुमारी का हाथ उसके हाथ में सौंप दिया। राजकुमारी भी अब पूरी तरह होश में आ चुकी थी। उसने कनखियों से पहले शूरवीर को देखा, फिर राजकुमार को और खिलखिलाकर हँस दो।'

तभी राजकुमार चिल्लाया—'राजा साहब ! देखो, ये आपने क्या कर दिया ? राजा ने देखा राजकुमार ने उस शूरवीर की पगड़ी, दाढ़ी और मूंछ सब उखाड़ फेंकी थी।' 'अरे, यह क्या? यह तो उसी बूढ़े लोहार का बेटा है।' राजा चिल्लाया। 'जी हाँ, राजा साहब ! जिसके बाप को आपने अपनी कैद में घुट-घुट कर मरने के लिये मजबूर कर दिया है, यह वही है मेरा जांबाज दोस्त।'

राजा ने अपने बेटे के व्यंग्य को समझते हुए कहा, 'मुझे क्षमा करो बेटे ! आज इस हीरे को दामाद बनाकर मैंने एक नहीं दो-दो बेटे पा लिये हैं।'

इतना सुनकर दोनों दोस्त—'पिताजी'....कहते हुए राजा से गले जा मिले। राजा की आँखें प्रेम से छलछला उठीं।

राजा ने अपने बेटे और दामाद से कहा, 'आओ मेरे साथ' और वे सब तहखाने की ओर बढ़ चले। बूढ़ा लोहार अपने बेटे के साथ राजा को अपनी ओर आते देख चौंका—'तो क्या इसे भी इसी नरक में मरना होगा?'

पर राजा ने पहरेदार को ताला खोलने का संकेत दिया। राजा ने अपने हाथ से बूढ़े लोहार की हथकड़ियाँ खोलीं और लगा क्षमा माँगने। जब वस्तुस्थिति ज्ञात हुई तो बूढ़ा लोहार अपने बेटे से गले जा लगा, बोला—'मुझे तुमसे ऐसी ही आशा थी'।

अगले दिन राजसभा में बूढ़े लोहार के सिर पर राजा ने अपने हाथ से पगड़ी बाँधी और राजकुमार के दोस्त के सेहरा !

शहनाई और बधाई-गीतों के मिले-जुले स्वरों के बीच कुछ स्वर बूढ़े लोहार के मस्तिष्क में भी उठ रहे थे। हाँ, यह स्वर मन-मस्तिष्क में चल रहे अन्तर्द्वन्द्व के थे। वह निर्णय न कर पाया कि यह सेहरा, मेरे बेटे की जांबाजी का सम्मान है या मुझे मिली बेकसूर सजा का प्रायश्चित्त !

राजकुमार प्रसन्न था अपने पिता के बदले दिल से, बूढ़े लोहार की आजादी से और दोस्ती की रिश्तेदारी में हुई खुशगवार तब्दीली से।

टीचर

तो आखिर मैं यूँ कब तक भटकता रहूँगा। मैं एक आदिवासी हूँ। क्या इसलिए मेरे लिए कोई रोजगार नहीं है? आज जो मेरी शिक्षा मुझे रोजगार नहीं दिला सकती, मुझे स्कूल में दाखिल कराते समय क्या ऐसा मेरे माँ-बाप ने सोचा था। मैं अपने गुजरे हुए बचपन को कैसे भुलाऊँ। माँ कहा करती थी, 'जब तू पैदा होए ना तब सब कबीला खुश होए।'

सच, मैंने भी तो यह देखा कि मुझसे कबीले वाले कितने खुश रहते थे। शहर और गाँव से दूर एक पहाड़ की पीठ पर बसा हमारा कबीला, आह! उसकी याद ही कितनी मीठी है। मेरे जन्मने से कबीले में इसलिए खुशी छायी थी, क्योंकि उस दिन कई महीनों का सूखा टल गया था। अच्छी बारिश जो हुई थी।

मैं अपने कबीले का एकमात्र लड़का ऐसा था जो लिखना सीखने के लिए गाँव की स्कूल जाया करता था। चार कोस से कम न चलता था। दो जाना और दो आना। पहले तो मेरा भी मन पढ़ने में न लगा। मास्टर जी ने जिस दिन मुझे मारा था, मैंने तो तभी माँ से कह दिया था मुझे शाला नहीं जाना। एक तो इतना चलकर जाओ और ऊपर से मार खाओ। एक दिन पाटी कोरी रह गई तो सारे दिन धूप में

खड़ा रखा, मुर्गा बनाया सो अलग। मेरे बाबा ने तो कह भी दिया था, 'गियान इस्कूल जाने से णी आएला, गियान तो बड़े-बुजुर्गों के साथ बैठने मा ही जानेला।'

यह तो मेरी माँ थी, जिसने बाबा की एक न सुनी और हमेशा मुझे पढ़ने-पढ़ाने के लिए कोशिश करती रहती। माँ तो बाबा से क्या पूरे कबीले से कहती थी, 'हम न पढ़ेल पर अपने बिटुवा को पढ़ायेल'। माँ का सपना और सोचना कोई बेकार थोड़े ही था। पढ़ना-लिखना तो हरेक को आना चाहिए। हम अनपढ़ हैं इसका मतलब यह तो नहीं कि अपनी संतान को भी न पढ़ाएँ।

आखिर माँ कितनी खुश होती थी, जब वह मुझे बगल में पाटी लिए स्कूल जाता देखती थी। और उस समय तो वह चौगुनी खुश हो जाती जब मैं हर साल पास होने की बात माँ से कहता। 'भऊवा-ओ-भऊवा तौर बिटुवा पास होई गयेल' माँ खुशी से मुझे अपने गले लगा लेती और मुझे प्यार से सहलाते हुए मेरी मीठी ले लेती।

माँ की खुशी को मैं अपनी खुशी मानता था। सच में माँ की खुशी ही मेरी पढ़ाई की प्रेरणा बनी। पूरा कबीला कहा करता था, 'अरे तौर बिटुवा तो अब साहेब बणेल रे'। और माँ यह कहकर सबकी बात को मजबूत कर देती, 'जरूर बणेल जरूर। सब कबीलार किरपा है।'

आज मैं पूरा बाइस साल का हो गया हूँ। माँ बाबा बूढ़े हो गए हैं। मैं ही उनकी लाठी हूँ, जिससे वे अपना बुढ़ापा चला सकें। अगर मैं ही कुछ न कर पाया तो पता नहीं रोटी

का भी रोजगार कहाँ से जुटेगा ? पहले तो बाबा नुकीले तीर बना लेते थे, शिकार खेल लेते थे, लुहारी की ठोका-पीटी भी कर लेते थे, पर बाबा को तो अब आँखों से दिखाई ही नहीं देता। ठोका-पीटी के वक्त एक आँख में अंगारा गिर जाने से वो जाती रही। दूसरी बुढ़ापे का तकाजा हो गई। अब तो बस मैं ही हूँ, अपना भी और अपने बाबा का भी।

जब कल अपने घर से मैं रवाना हुआ माँ को कहां पता था कि उसका यह 'कोल्हू का बैल' कहीं न पहुँचेगा ? माँ ने तो मुझे अपने हाथ से गुड़ खिलाया, ललाट पे देवता के नाम का तिलक किया और आँखों में खुशी के आंसू ढुलकाते हुए बोली, 'अब तू बड़ा होई गयेल। तौ पेई है घर को आसरो अब। भगवान तौर लाज रक्खे।'

माँ का आशीर्वाद काम करेगा जरूर, पर पहले इन भूखे कुत्तों को रोटी मिले तब न ! अब तक कम-से-कम पच्चीस इंटरव्यू दे चुका हूँ, जवाब में कहीं फैल न हुआ।.... हाँ फैल नहीं हुआ, अरे ! न लगी तो फैल न हुआ तो क्या पास हुआ ?

रोजगारी की रपट सुनने के लिए ही तो गाँव तक आता हूँ और रोज रेडियो सुनता हूँ, अखबारों को उलट-फेर करता हूँ, बांचता हूँ। अपनी बेरोजगारी के पचासों फार्म तो भर चुका हूँ। आज तो उम्मीद पक्की थी। खुद इण्टरव्यू लेने वाले आफिसर ने तारीफ की थी। उसकी जेब न भरी तो टाँय-टाँय फिस्स !

जब अपने घर पहुँचूगा माँ बेसब्री से इन्तजार कर रही होगी। जब उसे पता चलेगा कि उसका बेरोजगार बेटा आज

भी रोजी-रोटी की व्यवस्था किए बगैर निराश लौटा है तो उसकी आशाएं किस शून्य में जाकर खुशियों की तलाश करेगी।

क्या, माँ-बाबा ने मुझे निराशाएं वसूलने के लिए पाला-पढ़ाया है ? जानता हूँ सबके अपने-अपने कर्तव्य होते हैं। कर्तव्यों की पालना ही आत्मा की संजीदगी है। बाबा ने अपना कर्तव्य निभाया। माँ ने कितने प्यार के साथ अपनी जिम्मेवारियाँ अदा की। एक मैं हूँ जो....। क्या बेटे के कोई फर्ज नहीं होते ? होते हैं, जरूर होते हैं। जब वे न चूके तो मैं किस चिकनी देहलीज पर जाकर फिसल रहा हूँ। पर आखिर मैं करूं भी तो क्या ?

नहीं-नहीं, चाहे कुछ भी हो जाए मैं बाबा के अपने लिए बहाए हुए एक-एक बूंद पसीने के लिए अपना खून बहा दूँगा। माँ की गुजरी हुई खुशियों को अगर मैंने उसे लौटाकर न दिया तो उसके दूध के साथ मेरी नमक हरामी होगी। मैं....मैं....।

अड़तालीस, साढ़े अड़तालीस और चवन्नी, पौने उनपचास और दो पौने इक्यावन। या....हू ! आज तो मजा आ गया। इस महीने की तो ये सबसे ज्यादा कमाई है, रिकार्ड इनकम वंडरफुल ! जैसे ही उसने सड़क के एक किनारे बैठे मोची के ये शब्द सुने उसका दिमागी ज्वार हठात् थम गया। पता नहीं मन-ही-मन अब तक वह कितने उतार-चढ़ाव भरे विचारों के गलियारों को पार कर चुका था। अपने माँ-बाप का इकलौता बेटा था। जन्मजात आदिवासी, किन्तु पढ़ा-लिखा, श्रमनिष्ठ और स्वावलम्बी। नौकरी की तलाश में उसने सरकारी

विभागों में न जाने कितने चक्कर काटे और न जाने कितने इंटरव्यू दिए। सदैव एक ही वजह से उसका चयन रुक जाता, क्योंकि उसके पास इंटरव्यू लेने वाले अधिकारियों के लिए नजराना न था।

वह काफी दूर चला आया था। कदम सड़क पर बढ़ते रहे और विचार मस्तिष्क में चलते रहे। न जाने वह तो और भी बहुत कुछ सोचता रहता अगर उनपचास, पचास की बाधा न आती। उसने पाया कि सड़क के किनारे बैठा हुआ मोची अपनी दिन-भर की कमाई को गिन रहा था। दूर से देखकर ही यह अंदाज लगाया जा सकता थाकि मोची कितना खुश था।

उसके मन का अन्तर्द्वन्द्व एकबारगी फिर चालू था। अरे! एक अनपढ़ गंवार आदमी भी मेहनत करके दिन में पचास तक कमा सकता है, तो मैं पढ़ा-लिखा होकर भी कुछ नहीं कर सकता। नौकरी न लगी तो क्या हुआ। विकल्प को भी तो स्वीकार किया जा सकता है। आखिर यह मोचो है तो क्या हुआ, उन अफसरों की तरह बेईमान तो नहीं है जितना कमाया अपने बाजू के बल से, ईमानदारी से। 'मेहनत' और 'काम' का क्या, जिससे भी रोजी-रोटी मिलती हो उसका स्वागत करने में हिचक कैसो? किसी की जी-हुजूरी और गुलामी से तो मोची का धंधा बेहतर है।

वह मोची को एकटक देखता रहा। युवक का इस तरह निहारना मोची को कुछ अखरा। वह बोला, 'बाबू! क्या देखत हो?'

मोची के इस अप्रत्याशित प्रश्न पर उसने गहरी साँस छोड़ी और कहने लगा—'देख रहा हूँ दोस्त! तुम्हारी मेहनत

की गाढ़ी कमाई को और सोच रहा हूँ खुद भी यही धंधा सम्भालूँ ।'

'क्या कहत हो बाबू ! आप ई काम करिवो ।'

'हाँ भैया ! आफिसरों की खुशामदी से तो जनता के जूतों की पालिश करना अच्छा है ।'

मोची युवक की बात सुनकर हक्का-बक्का रह गया। वह उसका चेहरा अचम्भे से देख ही रहा था कि तभी एक अधेड़ उम्र के व्यक्ति मोची की टपरिया पर आये और मोची की पेटी पर अपना पाँव रख दिया। मोची ने पूछा, 'क्या साहब पालिश कर दें ?' सहमति मिलने पर मोची ने साहब के जूतों पर क्रीम-पालिश लगाना चालू किया। युवक मोची का ब्रुश अपने हाथ में लेते हुए कहने लगा, 'लाओ दोस्त ब्रुश। मैं कर देता हूँ'। मोची से हाँ-ना का जवाब देते न बना। मानो उसकी आँखों और जुबान पर बेहोशी छा गई हो।

युवक ने अपना हाथ साहब के जूतों पर चलाना शुरू कर दिया। ब्रुश चलता रहा और जूतों पर चमक आती रही। साहब ने दो रुपये का सिक्का नये मोची के हाथों में थमाया। युवक का दिल खुश था। 'थैंक्यू सर, थैंक्यू !' साहब युवक की शिष्टता देख चौंके। उन्होंने युवक मोची का चेहरा गौर से देखा तो खिलखिला उठे—'अरे तूं !' युवक को पहचानने में देर न लगी कि यह साहब और कोई नहीं, उसकी हाई स्कूल के प्रिंसिपल थे। जब उन्होंने उससे उसकी आपबीती जानी तो कहने लगे—'मुझे मालूम है, तेरे जैसे कितने ही गनशील विद्यार्थियों को भी आज दर-दर की ठोकरें खानी

पड़ रही हैं। चल उठ, आज से तू मेरे पास रहेगा, विद्यालय में। रिटायर होने के बाद पास के गाँव में मैंने अपना एक प्रायवेट स्कूल खोल लिया है। अब तू 'मोची' नहीं 'टीचर' बनेगा 'टीचर'।

युवक अभी कुछ सोच ही रहा था कि प्रिंसिपल साहब ने दोनों हाथों से उसके कंधे पकड़ कर उसे उठा लिया। अन्यमनस्कता के साथ युवक दो कदम उनके साथ चला पर दिमाग में कुछ विचार आते ही वह एकाएक पलटा और लौटकर उसने मोची के पैर छुए, दो रुपये का सिक्का उसकी पेटी में डाला और प्रिंसिपल साहब के पीछे हो लिया।

'नमस्ते, टीचर भैय्या!' मोची ने पीछे से जोर से आवाज देते हुए कहा, पर दोनों के बीच दूरी इतनी हो गई थी कि मोची की आवाज उस तक न पहुँच पाई। उसने पीछे मुड़कर देखा, मोची अपना सामान समेट रहा था।

प्यार

युवा वजीर किसी शांत गली से गुजर रहा था। आज वसंत का दिन था, इसलिए सभी नागरिक वसंत उत्सव में गये हुए थे। शहर की गलियाँ इतनी मौन थीं कि थोड़ी-सी सरसराहट-भी व्यक्ति का ध्यान खींच सकती थी। वजीर की नजर उस समय अचानक ऊपर की ओर उठ गई जब उसे कुछ सरसराहट सुनाई दी। उसने इतने खूबसूरत चेहरे को देखा कि शायद ही और किसी माँ ने इतनी सुन्दर बेटी को जन्म दिया हो।

वजीर ने ऐसा सौन्दर्य पहले कभी नहीं देखा था। उसके मन में सौन्दर्य के लिए प्रेम तो था, किन्तु उसे हथियाने के लिए कोई हठयोग न था। ऐसे लोग कम ही होते हैं, जिनके मन में नारी के लिए सम्मान हो। हालाँकि वजीर उस चेहरे को पहचान न पाया, किन्तु उसने यह पता लगा लिया था कि वह कौन थी। चेहरा क्षण भर के लिए उभरा था और वापस वैसे ही वहाँ से गायब हो गया जैसे क्षण भर के लिए चमकने वाली बिजली।

वह किशोरी वास्तव में एक जुलाहे की बेटी थी। जन्म तो उसका खेत-खलिहान के बीच हुआ था, पर रूप किसी राजकुमारी से कम न था। सम्भव है कोई राजकुमारी भी उसे देखकर ईर्ष्या कर बैठे। सुन्दरता और निर्धनता के बीच उसका भाग्य अधर में लटका था।

वह जनानाघर में बैठी एक प्यारा-सा शानदार रूमाल बना रही थी। रूमाल पर उसने फूलों का गुलदस्ता बनाया। उसकी सुई-धागे की अठखेलियाँ बड़ी कलापूर्ण थीं। गुलदस्ते के बीच एक युवा चेहरा उभरा आ रहा था। होंठ पूरे होने वाले ही थे कि किसी ने द्वार पर दस्तक दी।

जुलाहे ने पूछा, 'कौन है भैया बाहर'।

जवाब मिला, 'मैं हूँ, कृपया दरवाजा खोलिए।'

'अरे भई ! मैं कौन ?'

'वजीर।'

जुलाहा घबरा गया। वजीर का एक जुलाहे के घर क्या काम। खुद वजीर चले आए हैं। मुझसे तो कोई अपराध नहीं हुआ है। उसने डरते-सहमते हाथों से दरवाजा खोला और लगा वजीर को झुक-झुक अभिवादन करने, 'पधारिए-पधारिए माई बाप' ! इस गरीब की कुटिया में बड़े सरकार पधारे यह तो मेरा सौभाग्य है, पर कष्ट की बजाय मुझे ही बुला लिया होता।

वजीर ने जुलाहे के अभिवादन को स्वीकार करते हुए नम्रतापूर्वक अपना सिर झुकाया। जुलाहे के काँपते पाँव से लग रहा था कि वह बाहर से सम्मान जरूर दे रहा है, पर भीतर से कितना भयभीत है।

वजीर और जुलाहा दोनों काफी देर तक चुपचाप बैठे रहे। दिक्कत यह थी कि बात की शुरूआत कौन करे। जुलाहा डर के मारे चुप था और वजीर शर्म के मारे।

वजीर को ही अपना साहस बटोरना पड़ा। वह उठ खड़ा हुआ और उसने नम्रतापूर्वक कहा, 'यदि आप इजाजत दें तो मैं आपकी पुत्री से विवाह करना चाहता हूँ।'

'क्या ? आप और मेरे दामाद ? कहीं आप मुझ गरीब की दिल्लगी तो नहीं कर रहे हैं ?'

'मैंने जो कहा वह वास्तविक है।'

जुलाहे का चेहरा खिल उठा, क्या सचमुच ! यदि यह सच है तो मैं इसे अपनी सात पीढ़ी का सौभाग्य समझता हूँ। मैं धन्य हो गया। मेरी बेटी निहाल हो गई। लाख-लाख शुक्रगुजार हूँ उस परवरदीगार का, आज मेरी इबादतें पूरी हुईं।

'तो आपकी मंजूरी है ! वजीर ने प्रसन्न चेहरे से पूछा।

'जुलाहे की बेटी से वजीर का विवाह होना, मैं खुदा की मेहरबानी मानता हूँ। ना-मंजूरी का तो सवाल ही नहीं उठता, हुजूरे आलम!'

'पर पहले आप अपनी बिटिया से पूछ लें। क्या वह इस रिश्ते के लिए तैयार है ?'

'बेटी वही करेगी, जो उसका बाप चाहेगा।'

'वह अपने बापू के हुकूम की सदा तामील करती है।'

'मैं इस कायदे से वाकिफ हूँ, मगर दिल के अपने कायदे कानून होते हैं। मुझे केवल आपकी ही मंजूरी नहीं चाहिए। आपकी बेटी की भी मैं इच्छा जानना चाहता हूँ, जिससे शादी

करने का मैंने मन बनाया है। यह प्रेम का संसार है और प्रेम में किसी पर दबाव डालना मौत से भी बुरा है। यदि आपकी बेटी हाँ करेगी तो मुझे खुशी होगी। ना कहने पर मैं बिना किसी दबाव डाले यहाँ से वापस लौट जाऊँगा।

किशोरी दीवार की ओट में अपने पिता और वजीर के बीच हुई सारी बातचीत सुन चुकी थी। उसने मन-ही-मन कहा—मैं तो पहले ही आपको अपने दिल में बसा चुकी हूँ। उसने अपने बुने हुए रूमाल को अपने सीने से लगा लिया। वह अपने भावों में बही जा रही थी कि उसके पिता ने आकर उसकी तंद्रा भंग कर डाली।

'अरी ओ बिटिया! तेरी तो नसीब खुल गयी। अरी! देख खुद वजीर मियाँ हमारे घर पर तुम्हारा हाथ माँगने आए हैं, तुम्हारी मंजूरी चाहते हैं। मैं तो कहूँगा जल्दी से मंजूरी दे दे।'

किशोरी ने लज्जाते हुए कहा, 'जैसा आप ठीक समझें। एक पिता अपनी पुत्री को वही कहेगा, जिससे उसका भला हो।'

जुलाहा प्रसन्न होकर बिटिया के मुँह से ही वजीर को खुशखबरी सुनाने के लिए उसे साथ ले आया। वजीर ने पहली बार इतने नजदीक से अपनी स्वप्न-सुन्दरी का रूप निहारा था। वजीर ने रस्म के लिए अपने हाथ से अंगूठी निकालकर किशोरी के हाथ में पहना दी।

जुलाहा वजीर द्वारा अंगूठी पहनाते समय सोचने लगा, 'मुझ गरीब के पास तो ऐसा कुछ भी नहीं है जो मैं **बतौर**

तोहफा दे सकूँ ।' जुलाहा इस उधेड़बुन में उलझा ही था कि उसकी बेटी ने शर्माती आँखों से अपने हाथ से बना रूमाल वजीर की ओर बढ़ा दिया ।

वजीर ने इसे प्रेम का उपहार समझा और उसे चूम लिया । वजीर ने रूमाल खोला तो दंग रह गया । रूमाल में गुलदस्ते के बीच जो नूर निखरा हुआ था वह वास्तव में उसका अपना था, वजीर का था ।

सेनापति को वजीर के इस सम्बन्ध का पता चल गया वह ऐसा कोई-न-कोई बहाना ढूँढ ही रहा था जिससे वजीर को अपने रास्ते से हटाया जा सके । वजीर आखिर उसकी ख्वाहिशों का रोड़ा था, जो उन्हें कारगर नहीं होने दे रहा था ।

सेनापति ने नवाब से कहा, 'हुजूर ! आपकी जनता में एक ऐसा हीरा है, जो वास्तव में आपके राजमहल की शोभा होना चाहिए । मगर, गुस्ताखी माफ हो । बदकिस्मती से उस पर वजीरे-आलम का हक होने जा रहा है ।

'तुम्हारा क्या मतलब है, सिपहसालार !' बादशाह ने बात को साफ करने के लिए कहा ।

'हुजूर ! एक वजीर की नीयत अपने बादशाह के प्रति आइने-सी साफ सुथरी होनी चाहिए । पर....पर ऐसा नहीं है । शहर के परकोटे के पास रहने वाले जुलाहे की बेटी ही वह हीरा है, जिस पर वजीर की नीयत है । वजीर को वह सुन्दरी आपको भेंट करनी चाहिए थी, किन्तु वह इसकी बजाय खुद उससे शादी करने जा रहा है ।'

बादशाह उत्तेजित हो उठे। कहने लगे, 'वजीर की यह हिम्मत ! मैं तुम्हें हुक्म देता हूँ कि तुम हमारे लिए उसका बंदोबस्त करो हम उससे शादी करेंगे।'

सेनापति यही तो चाहता था। वह सीधे जा धमका जुलाहे के घर और एक ही साँस में सुना डाला शाही हुक्म।

जुलाहा तो तैयार हो गया, मगर उसकी बेटी ने उसके सामने ही सेनापति को साफ मना कर दिया कि प्यार कोई खिलौना नहीं है जो कभी इस हाथ और कभी उस हाथ में चला जाए। वह वजीर की मंगेतर है और वजीर की ही रहेगी।

किशोरी के मुँहतोड़ जवाब से सेनापति आग-बबूला हो उठा। चिल्लाया, 'दो टक्के की छोकरी की यह मजाल ! कल तक का समय देता हूँ। प्रेम से मान जाएगी, तो ठीक है, अन्यथा चोटी पकड़कर खींच ले जाऊँगा।'

जुलाहे ने भी अपनी बेटी को बहुतेरा समझाना चाहा, पर वह टस-से-मस न हुई। आखिर जुलाहे ने यह कहकर सेनापति को रवाना किया कि बच्ची है। अभी मना कर रही है, लेकिन वह मान जाएगी।

उधर बादशाह ने अपनी अंगुलियों में चौरस की गोटी घुमाते हुए वजीर से कहा, 'मैं नयी शादी करना चाहता हूँ वजीर !'

'क्या आपकी मंगेतर सुन्दर है, उसका खानदान इज्जतदार है ? वजीर ने पूछा।

'हाँ खूबसूरत और इज्जतदार भी।'

'तो जरूर की जानी चाहिए। मेरी ओर से हुजूरे-बादशाह को मुबारक है। मेरे लिए क्या हुकूम है।'

'मैं तुम्हें एक जिम्मेदारी सौंपता हूँ। तुम सेहरा लेकर जाओ और बात पक्की कर आओ।

'हुजूरे बादशाह का निकाह तय कराना मेरे लिए शान की बात होगी।'

'तो जाओ फिर।'

'लेकिन हुजूर! किसके यहाँ। कौन है वह नूर की परी।'

अरे वही, शहर के परकोटे के पास बसे जुलाहे की बेटी।

'क्या? परकोटे के पास बसे जुलाहे की बेटी ....?'

'हाँ-हाँ वही, क्यों तुम्हें कोई ऐतराज है।'

वजीर का चेहरा गम्भीर हो गया। उसने बिना किसी हिचकिचाहट के कहा, 'मैं आपके इस हुकूम की तामील नहीं कर सकता।'

'तुम्हारी जुर्रत कैसे हुई ना कहने की। हमारा हुकूम है....।'

हुजूर! चाहे जो सजा दे, मैं यह काम अदा नहीं कर सकता। 'वजीर ने वादशाह की वात को वीच में ही लंगड़ी मारते हुए कहा।'

वादशाह चिल्लाया, 'आखिर क्यों?'

'क्योंकि, एक दूल्हे के लिए अपनी मंगेतर की शादी किसी और से कराना ना-मुमकिन है, फिर चाहे वह दूसरा खुद बादशाह ही क्यों न हो ?'

'तो यह बात है। इसका मतलब सिपहसालार की बात सही थी। तुमने हमसे छिपाया और हुकूम की अदायगी न की। तुम्हारे लिए देश निकाले का फरमान जारी किया जाता है।'

वजीर ने कोई प्रतिक्रिया न की और राजसभा से निकल गया।

वजीर सीधा अपनी मंगेतर के घर पहुँचा। उसकी मंगेतर ने वजीर को वह सब कुछ कह सुनाया जो सेनापति के साथ घटा था। वजीर ने भी अपने देश निकाले की बात मंगेतर से कह सुनाई।

वजीर को इस खतरे का आभास हो गया था कि यदि बादशाह का यह हुकूम न माना गया तो जुलाहे का सारा घर-बार ही उजाड़ दिया जाएगा। उसने अपनी मंगेतर को समझाया कि वह बादशाह से निकाह कर ले।

युवती किसी भी कीमत पर तैयार नहीं हुई। इस दौरान सेनापति ने जुलाहे की मंजूरी से राजा को वाकिफ करवा दिया। बादशाह बारात के साथ जुलाहे के घर की ओर रवाना हो गया।

मंगेतर को किसी ने इसकी खबर दी। वह सकते में आ गई और उसने मन-ही-मन कुछ तय कर लिया। उसने दो प्याले भरे और अपने हाथ से एक प्याला अपने प्रेमी को पिला दिया, जबकि दूसरा स्वयं गटक गई।

बैण्ड-बाजों की आवाज साफ सुनाई देने लग गई थी। वजीर उस समय चौंका जब उसने पाया कि उसकी मंगेतर के चेहरे का रंग काला-सा होने लगा। अचानक वह गिर पड़ी। उसके पाँव दरवाजे की ओर थे और सिर वजीर की गोद में।

'अरे! यह क्या हुआ? क्या हुआ तुम्हें? कहीं तुमने........।'

'हां प्रिय! मैंने जहर लिया है। मेरा प्याला जहर भरा था।'

'फिर जहर का प्रभाव मुझ पर क्यों नहीं हुआ?'

'क्योंकि तुम्हारे प्याले में शरबत था प्रिय! प्यार-भरा शरबत।'

वजीर की आँखों से आँसू ढुलक पड़े। यह तुमने क्या किया। मुझे शरबत पिलाया। तुमने मुझे भी अपने साथ जहर क्यों न पिला दिया?

मंगेतर का शरीर और काला हो गया था। उसने वजीर से लिपटते हुए कहा, 'आज तक ऐसा कभी नहीं हुआ कि किसी मंगेतर ने अपने ही प्रेमी को जहर पिलाया हो। मैं तो जा रही हूँ, पर मुझे खुशी है कि मेरी मौत तुम्हारी गोद में हो रही है। जीवन मैंने तुमको दे दिया है और ये लाश बादशाह को।

वजीर की आँखों से आँसू के दो बूँद उसकी मंगेतर के होठों पर आ टपके। मंगेतर के चेहरे पर एक प्यार भरी मुस्कान उभर आई और उसकी गर्दन एक ओर लुढ़क गयी।

कुलदीपक

स्कूल-बस जैसे ही पुल के पास वाली चूँगी पर रूकी, वह लड़का आज भी हाथ में पुराना गीला चिथड़ा लिये बस का शीशा साफ करने लगा। बस चलने को हुई तो उसने ड्राईवर के सामने हाथ पसार दिया। 'ओ लै ये दस्सी फड़ ले,' ड्राईवर ने दस का सिक्का उसकी तरफ फेंका और गाड़ी स्टार्ट कर दी।

यूँ तो रोज ही नीटू उस ठिगने कद के मैले-कुचैले कपड़ों वाले लड़के को चूँगी पर गाड़ियों के शीशे साफ करते देखा करता था, पर आज जब पत्थर दिल ड्राईवर अंकल नें भी दस का सिक्का निकालकर खुशी-खुशी उसे दिया तो उसे अचम्भा हुआ। नीटू कभी-कभी जब कार-मोटर वाले बाबुओं को शीशा साफ करने के बदले उस लड़के को दो-दो के नोट निकाल कर देते देखता तो सोचता कि वह थोड़ा बड़ा हो जाये तो ऐसे ही नोट कमाया करेगा।

तब नीटू को क्या पता था कि उसके पापा की दारू पीने की लत उसके परिवार को एक दिन किस मोड़ पर ला खड़ा करेगी। दिन बीतते गये और उसके पापा की दिन भर की कमाई दारू के अड्डे पर उड़न छू होती चली गई। अब तो नीटू को भी पैदल ही स्कूल जाना पड़ता। उसकी मम्मी का सखी-सहेलियों के साथ आये हफ्ते बाजार जाना भी एकदम छूट गया। आटे-दाल के कनस्तरों में भी चूहों की उछल-कूद

अब साफ सुनाई देती। मम्मी भी रात-रात आँखें फाड़ शहर के 'नर्सिंग होम' में धाय का काम करके जो कुछ कमा लाती उसी से परिवार की गुजर-बसर चलती।

लेकिन पापा को शायद यह भी गवारा न था। पापा ने धीरे-धीरे मम्मी के जेवर बेचने शुरू कर दिये और फिर तो रोज दारू पीने के लिए वे मम्मी से पैसे माँगते। पैसे न मिलते तो घर में जो गहना-जेवर से लेकर लोहा-लक्कड़ तक, जो भी हाथ लगता वे बेच डालते। उस दिन मम्मी ने अपनी मेहनत-मसक्कत के कुछ पैसे नीटू की फीस के लिये रख छोड़े थे, जिन पर उसके पापा की टक लगी थी।

उसने भी दो-तीन बार माँ को टोका था कि यदि इस बार फीस न भरी तो दोगुना 'दण्ड' भरना पड़ेगा। उसके मास्टर साहब की इस हिदायत का जब से माँ को पता चला वह एक-एक पैसा बचाकर रख रही थी। लेकिन पापा का इरादा तो कुछ और था।

'हरामजादी……। ला जल्दी ला वो जमा-जोखड़ी, वर्ना……।'

'भगवान के लिये इन पैसों पर अपनी नजर न रखो। यदि इस बार नीटू की फीस न गयी तो……।'

'सा……ली जुबान लड़ाती है।' धोती का पल्लू झंझोड़ते हुए पापा झल्लाए।

'नहीं पापा नहीं, मम्मी को मत मारो'। नीटू लगभग चीखते-पुकारते पापा को पीछे से पकड़कर खींचने की कोशिश कर रहा था।

लेकिन 'तड़ाक-तड़ाक' की आवाज के पीछे उसकी चीख पुकार दबकर रह गई। पापा ने मम्मी के तड़ा-तड़, तड़ा-तड़ एक साथ कई चाँटे दे मारे। चोटी पकड़ी और खींचकर ओसारे में ला पछाड़ा। वह बेहोश हो गई तो पापा ने उसके पल्लू में बंधे दस-दस के तीनों नोट निकाल लिये और 'अड्डे' की तरफ चले गये।

नीटू सिसकियाँ भरते हुए सहमा-सहमा यह सब देखता रहा और पापा के जाते ही दौड़कर वह पड़ौस वाली आँटी को बुला लाया। आँटी ने जल्दी से एक गिलास में पानी ले मम्मी के मुँह पर छिड़का। होश न आता देखकर चम्मच से उसके भिचे दाँत आँटी ने खोले और नीटू को गिलास से पानी मुँह में डालने को कहा। अब तक उसे होश आ चुका था। चार-छः घूँट पानी पीने के बाद वह सिसकियाँ भरने लगी।

'अपने नीटू की फीस कहाँ से लाऊँगी मैं अब?' कहते-कहते वह खुलकर रोने लगी। आँटी ने धीरज बँधाते हुए कहा—'सामने पीली कोठी वाले सेठजी बड़े अच्छे इंसान हैं। तुम चाहो तो चौके-बर्तन के लिए तुम्हारी बात करा दूँ। खाना-कपड़ा अलग से मिलेगा। नीटू की फीस वे सीधे स्कूल पहुँचा दिया करेंगे।' उसने झट हामी भर दी पर सोच वह अब भी रही थी कि पगार और वह सब तो महीने भर बाद होगा, लेकिन इस महीने के सिर्फ चार दिन बाकी बचे हैं। अचानक उसके दिमाग में कोई विचार आया और पड़ोसन के जाने के बाद वह तुरन्त पूजा-घर में घुस गई।

कुलदेवता के गले में पड़ा चाँदी का हार चुपचाप उसने निकाला और बाजार की तरफ चल दी। दुकानदार ने हार

को जाँचा-परखा और दो सौ रुपये गिनकर उसे दे दिये। रुपये सम्भालते हुए एक बार उसे लगा कि कुलदेवता उसे शाप दे रहे हैं। लेकिन दूसरे ही क्षण अन्दर से आवाज आई—'कुल देवता कुल की भलाई चाहते हैं और फिर अपने 'कुलदीपक' को बुझने से बचाने के लिए ही तो वह यह सब कर रही है।'

अभी माँ के मन में अन्तर्द्वन्द्व चल ही रहे थे कि पुल के पास पहुँच कर वह ठिठक गई। नीटू एक हाथ में अपनी 'फटी कमीज' का पोचा लेकर गाड़ियों के शीशे साफ कर रहा था। यह सब देखकर एकबारगी वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गई। थोड़ा साहस बटोर कर वह चूँगी के पास तक पहुँची तो उसे चक्कर आ गया और वह वहीं गिर पड़ी।

देखते-देखते उसके इर्द-गिर्द अच्छी खासी भीड़ लग गई। नीटू और वह ठिगना लड़का भी अब तक वहाँ पहुँच चुके थे। नीटू ने पास की दुकान से पानी लेकर माँ के मुँह पर छींटे मारे तो उसे होश आ गया। वह चिल्लाया—'देखो मम्मी ये दस रुपये! मेरी आज की मेहनत है यह। परसों तक मैं फीस के पैसे पूरे कर लूँगा। मम्मी, तू फिक्र न कर।'

अब तक मम्मी का अन्तर्द्वन्द्व भी समाप्त हो चुका था। वह इतना ही कह पायी—'चल मेरे कुलदीपक! चल, मैंने भी फीस का बन्दोबस्त तो कर लिया पर मेरे मन का संशय तो आखिर तूने ही हटाया। आखिर कुल देवता का हार, कुल-दीपक पर ही तो चढ़ा। हाँ·······कोई अधर्म नहीं किया मैंने।'

माँ-बेटे का वार्तालाप वहाँ जमा सारी भीड़ सुन रही थी पर किसी के पल्ले कुछ भी नहीं पड़ रहा था। आखिर

ठिगने लड़के ने चिल्लाकर सबका ध्यान तोड़ा—'अरे ! गाड़ी आ गई दोस्त !' वह दौड़कर गाड़ियों के शीशे साफ करने में जुट गया और नीटू ने अपनी माँ को हाथ से सहारा देकर उठाया और दोनों घर की ओर बढ़ लिये। लेकिन यह क्या ? उन दोनों ने देखा कि भीड़ में से निकलकर पापा भी उनके साथ चलने लगे थे। मम्मी और नीटू ने पापा को देखते ही रुपयों को छिपाने की कोशिश की मगर नीटू ने पापा का चेहरा देखा तो उनकी आँखों से आँसू ढुलक रहे थे। कुछ पूछने पर नीटू से वह इतना ही कह पाए—'तुम दोनों ने आज मेरी शराबी आँखें खोल दीं।' इतना कहते-कहते पापा का गला भर्रा उठा था। फिर भी वे लगभग गिड़गिड़ाते हुए बोले—'काश, तुम मुझे मेरे दोषों के लिए माफ कर सको।'

सीख

आज वह पूरा अठारह साल का हो गया था। उसके बाबा उससे बहुत प्रसन्न थे। अब वह बड़ा हो गया था। आखिर घर की वही तो एक उम्मीद थी, जो बुढ़ापे में उसका सहारा बन सके।

बाबा के पास चाँदी के तीन सौ सिक्के थे। उसने अपने जवान बेटे को सौ सिक्के दिए। बाबा ने उससे कहा, 'कल इस गाँव से सौदागरों का काफिला गुजरेगा। तुम भी उसी के साथ परदेश चले जाना। इन सिक्कों से ऐसा सौदा करना जिससे तुम्हें फायदा हो। अगर तुम दुगुने सिक्के करके लौटे तो मैं मान लूँगा कि अब तुम समझदार और होशियार हो गये हो।

लड़के ने अपने बाबा की सारी हिदायतों को ध्यान में ले लिया। उसने कहा बाबा तुम चिंता न करो, भगवान् ने चाहा तो तुम्हारी मेहरबानी से सौदा अच्छा ही पटेगा।

लड़के ने बाबा के धोक लगाई और काफिले के साथ रवाना हो गया। दिन गुजरते गए और कारवाँ बढ़ता गया। एक दिन उनका पड़ाव शहर के बीचों-बीच हुआ। सब लोग खरीद-बिक्री के लिए जुट गए। लड़का शहर देखने के लिए रवाना हुआ। उसका ध्यान एक ऐसे चबूतरे पर गया, जहाँ दिन में रोशनियाँ चमक रही थी। पचासों लोग वहाँ इकट्ठे थे। उनमें जवान लोग भी थे और पक्की उमर के भी।

लड़के ने किसी से पूछा, 'ये लोग यहाँ क्या कर रहे हैं?'

जवाब मिला, 'चौरस खेलना सीख रहे हैं।'

लड़के के मन में कुछ उत्सुकता जगी। वह सीधा उसी चबूतरे पर चला गया। उसने पाया सभी लोग चौरस खेलने में दिलो-जान से लगे हुए हैं। एक अधेड़ उम्र का आदमी चौकी पर बैठा है और चौरस सम्बन्धी जरूरी दाँव-पेंच सिखा रहा है। पूछने पर पता लगा, वही आदमी चौरस-खेल का गुरु है। पाँव में सुन्दर सी जूती पहने, बदन पे खूबसूरत दुशाला ओढ़े, वह अपनी अलग ही पहचान रखता था।

गुरु की बड़ी-बड़ी आँखें उसे बहुत अच्छी लगी, मगर गंजा सिर बड़ा भद्दा। उसे यह खेल बड़ा मजेदार लगा। उसने इसे सीखना चाहा। गुरु ने सिखाई के चाँदी के सौ सिक्के बतलाए। लड़के ने उसे वे सिक्के दे दिए, जिसे उसके गरीब बाप ने उसे सौदे के लिए सौंपे थे।

लड़के ने चौरस सीखने में बड़ी मेहनत की। छः महीने जरूर लगे, पर खेल में इतना होशियार हो गया कि कभी-कभी तो उसका गुरु भी मात खा जाता।

घर रवाना होने का समय आ गया। वापस लौटने के लिए उसके पास एक दमड़ी भी न थी। गुरु को उस पर तरस आ गई। उसने उसे चाँदी के दो सिक्के लौटा दिए।

घर पहुँचा तो उसका बाबा बहुत खुश हुआ। पर जब बाबा को लड़के से यह जानने को मिला कि उसने सौदे की बजाय चौरस खेलना सीखा है, तो उसने बेटे को बहुत डाँटा।

कुछ दिनों बाद उनके गाँव से सौदागरों का एक और काफिला गुजरा। बाबा ने यह सोचकर उसे सौ सिक्के दे दिए कि लड़के को एक बार और मौका मिलना चाहिए। उसने लड़के को सख्त हिदायत दे दी कि इस बार वह धन को फिजूल न गंवाएगा।

इस बार सौदागरों का कारवाँ एक ऐसे शहर में पहुँचा, जहाँ सभी लोग संगीत बजा रहे थे। लड़के ने पहली बार संगीत सुना था। संगीत ने उसे इतना मोहित कर डाला था कि वह अपने बाबा की दी हुई तमाम हिदायतें भुला बैठा। उसकी इच्छा हुई कि वह भी संगीत सीखेगा। यह हूनर सीखने के लिए भी उसे चाँदी के सौ सिक्के देने पड़े। लड़का मेहनती था। उसने बड़ी तन्मयता से संगीत सीखा। उसकी अंगुलियां इतनी सध गईं कि सितार बजाने में उसका कोई सानी न रहा।

घर पहुँचने पर बाबा की फटकार तो उसे मिलनी ही थी। आखिर बाबा का डाँटना गलत भी न था। बेचारे बूढ़े ने जैसे-तैसे तो पैसा बचाया और बेटा पूँजी को बढ़ाने की बजाय घटाता चला जा रहा है। जब उस गाँव से एक और सौदागरों का कारवाँ गुजरा तो बाप ने लड़के को अपनी खून-पसीने की बाकी बची धनराशि देते हुए उसे कह दिया, 'यह आखिरी मौका है। यदि ये सौ सिक्के भी तूने गँवा दिए तो तुम्हारा यह बूढ़ा बाप तो भूखों मरेगा ही, तुम्हें भी दाने-दाने के लिए मोहताज होना पड़ेगा।'

इस बार सौदागरों का कारवाँ ऐसी जगह पहुँचा, जहाँ देश का विश्वविद्यालय था। लड़के ने जब वहाँ विद्यार्थियों को

पढ़ते-लिखते देखा तो उसने निर्णय कर लिया कि वह भी पढ़ना-लिखना सीखेगा। भले ही उसे अपने पिता की बेशर्म डाँट सुननी पड़े या दर-दर भीख माँगनी पड़े।

लड़के ने पहले सौ सिक्के चौरस सीखने में खर्च किये, दूसरे सौ सिक्के संगीत सीखने में और तीसरे सौ सिक्के पढ़ने-लिखने में। उसे इस हालत में घर लौटना उचित न लगा। उसने एक सौदागर के यहाँ नौकरी कर ली। सौदागर अच्छे पैसे वाला था। उसका काफिला भी बड़ा भारी था। कई दिनों का सफर था। सौदागर ने उसे कुँए से पानी लाने का आदेश दिया।

लड़के ने रस्सी से डिब्बे को बाँधा और कुँए में उतार दिया, पर कुँआ रस्सी से भी गहरा था। इसलिए पानी लेने के लिए लड़का कुँए की सीढ़ियों से नीचे उतर गया। उसने जैसे ही डिब्बा भरा, उसे कुँए के एक ओर एक खुला दरवाजा दिखाई पड़ा। कुँए में दरवाजे का क्या काम! कौतुहलवश वह उस ओर बढ़ चला। उसने स्वयं को एक कमरे में पाया। उसने देखा कि वहाँ कोई सफेद कपड़ा ओढ़े सोया है और उसके शरीर से सिर लगाए कोई बूढ़ा आदमी आँसू ढुलका रहा है।

बूढ़े ने अनजान लड़के को अपने कमरे में देख पूछा, 'तुम कौन हो और यहाँ किसलिए आए हो?'

लड़के ने सारी आपबीती कह सुनाई। जब उसे यह मालूम हुआ कि आगन्तुक संगीत बजाना जानता है तो उसके चेहरे पर चमक खिल आई। बूढ़े ने बताया, 'यह जो सामने

पड़ा है, वह मेरा बेटा है।' इसे बेहोश हुए दो दिन हो चुके हैं। मेरे पास एक चमत्कारी सितार है। इस सितार की यह विशेषता है कि इसे बजाने से बहोश तो क्या एक बार तो मरा हुआ आदमी भी जिंदा हो उठता है। मुश्किल है, मैं सितार बजाना नहीं जानता। क्या तुम यह मेहरबानी करोगे ?

लड़के ने प्रेम से सितार बजाया और सचमुच बेहोश पड़ा आदमी उठ बैठा। बूढ़ा बहुत खुश हुआ। उसने लड़के को लाख-लाख धन्यवाद दिया और एक हजार सोने की मोहरों का पुरस्कार भी।

जब सौदागर को इस बात का पता चला कि उसके नये नौकर के पास सोने की ढेर सारी अशर्फियाँ हैं, तो उसने उससे कहा, 'मैं तुमसे बहुत प्रभावित हुआ हूँ। मेरी एक सुन्दर बेटी है, चाहता हूँ कि उसका विवाह तुमसे हो जाये। तुम घोड़े पर सवार होकर मेरे घर चले जाओ। यह काफिला पहुँचे उससे पहले विवाह हो जाना चाहिए।'

सौदागर ने उसे एक पत्र दिया, जो उसने अपनी पत्नी के नाम लिखा था। लड़के ने स्वर्ण मुद्राएँ घोड़े पर लादीं और सौदागर के घर की ओर रवाना हो गया। मार्ग में उसने सोचा—सौदागर ने उसे पत्र दिया है, क्यों न इसे खोलकर पढ़ लिया जाए। आखिर उसने पढ़ने के लिए ही तो चाँदी के सौ सिक्के खर्च किये हैं। उसने पत्र पढ़ा तो दंग रह गया। पत्र में लिखा था—

प्रिय पत्नी !

पत्र वाहक के पास सोने की हजार अशर्फियाँ हैं। मैंने इससे झूठ कहा है कि मैं अपनी बेटी से तुम्हारा विवाह करना

चाहता हूँ। तुम इसे भोजन में जहर खिला देना फिर इसके धन के मालिक हम होंगे।

लड़के ने पत्र की भाषा बदल दी। उसने दूसरा पत्र लिख डाला।

प्रिय पत्नी !

पत्रवाहक बड़ा होनहार युवक है। इससे तुम अपनी बेटी का विवाह कर देना। मेरे आने की इंतजारी मत करना। स्वागत वगैरह में कोई कमी नहीं रहनी चाहिए।

पत्र पाकर सौदागर की पत्नी बहुत प्रसन्न हुई। वह ऐसा ही तो दामाद चाहती थी। उसने लड़के का हार्दिक स्वागत किया और उसी रात अपनी बेटी का हाथ भी पीला कर दिया।

अगले दिन लड़के ने सबसे कहा, "मैं व्यापार के लिए आगे जा रहा हूँ, मेरे कुछ दुश्मन आज रात को मेरी खोज में यहां तक आयेंगे, मगर तुम दरवाजा मत खोलना।" यदि कोई चारदीवारी लांघकर भीतर कूदना चाहे तो टूट पड़ना। ऐसी मार पिलाना कि छठी का दूध याद आ जाए।

लड़का रवाना हो गया, पर रवाना होने से पहले उसने धोखेबाज को धोखा देने का पूरा बंदोबस्त कर लिया। रात को सौदागर का काफिला अपने घर पहुँचा। आश्चर्य ! घर के बाहर रोशनी तक न थी। पहरेदार की चहलकदमी भी सुनाई न दे रही थी। सौदागर ने दरवाजे की ड्योढी खट-खटाई। उसके अचरज की सीमा तब टूट गई, जब काफी देर

खट्-खट् के बाद भी दरवाजा खुलना तो दूर अन्दर से किसी के हाँ-ना की आवाज भी सुनाई न दी ।

सौदागर को शंका हुई । वह दीवार फाँदकर भीतर कूदा, पर यह क्या ? उस पर एक साथ बीसों डंडे आ पड़े । सौदागर चीखने लगा । पहरियों को असलियत का पला चला, तब तक तो वे सौदागर की इतनी पिटाई कर चुके थे कि वह उठने तक के काबिल न रहा । वह काफी देर तक बेहोश पड़ा रहा और जब होश आया तो उसने अपनी पत्नी से पूछा, 'तुमने उस आदमी का क्या किया, जिसे मैंने खत देकर भेजा था ।'

वही किया जो आपने लिखा ।' पत्नी ने सहजता से जवाब दिया ।

और सोने की मोहरें ?

कौनसी मोहरें ?

"अरी भागवान् ! मैंने पत्र में यही तो लिखा था कि उस लड़के को मार देना और मोहरें अपने पास छिपा देना ।"

पत्नी तुनककर बोली, "कहीं आपका दिमाग तो फिर नहीं गया है । क्या मैं अपने दामाद को मार देती ?"

"कौनसा दामाद ?" पति ने मिजाज बदलते हुए कहा ।

"अजी ! हद हो गई, आप ही ने तो लिखा था कि अपनी बिटिया से उसका विवाह कर देना । मेरी इन्तजारी की जरूरत नहीं ।"

सौदागर ने अपना माथा ठोका, "हे भगवान ! क्या चाहा था और क्या हो गया । लेने के उल्टे देने पड़ गए ।

लड़का घोड़े पर सरपट भागा चला जा रहा था। जंगलों को पार कर जब वह नगर में पहुँचा, उसे मुनादी की आवाज सुनाई दी, "बादशाह-ए-सलामत के हुकूम से जो कोई शहंशाह को चौरस में मात दे देगा, उसे बादशाह के मुल्क का तख्ते-ताउस घोषित किया जाएगा। मगर जो इस खेल में बादशाह से हार जाएगा, उसकी गर्दन सर-कलम कर दी जाएगी।

लड़के ने इस चुनौती को स्वीकार कर लिया। वह हरकारा के साथ चल पड़ा। राजसभा खचाखच भरी हुई थी। लोग दम साधे बैठे थे। चौरस खेलने में सभी उस्ताद थे, पर इस डर से कोई आगे आने को तैयार नहीं था कि अगर हार गया तो·······?

लड़के का साहस देखकर खुद बादशाह अलमस्त हो उठा। वह बूढ़ा था और निःसंतान भी। वह जीते जी अपना उत्तराधिकारी किसी को नियुक्त करना चाहता था। चौरस में उसे मात देना कोई सामान्य बात न थी, फिर भी खेल तो मात्र बहाना था। बादशाह खेल के बहाने किसी साहसी और बुद्धिमान व्यक्ति को अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता था।

बादशाह और लड़के के बीच तीन पारियाँ खेली गईं। एक पारी बादशाह जीता, पर दो पारी लड़का। भरी सभा के बीच खुद का हारना सम्राट के लिए शर्म-भरा जरूर था, किन्तु उसने खुशी-खुशी अपना तख्त उस लड़के को सौंपने की घोषणा की, जो नेक और समझदार था। सम्राट ने माना कि

यह लड़का बुद्धिमान, साहसी और चतुर है। जैसे ही राजा ने अपना मुकुट बुद्धिमान लड़के के सिर पर रखा, सारी राज सभा तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठी।

प्रजा के नाम अपना पहला संदेश देने के लिए जैसे ही नया राजा खड़ा हुआ, उसने अपने बाबा, सौदागर और उसकी बेटी को राजसभा में प्रवेश करते हुए पाया। जो वास्तव में उसे ढूंढ़ते हुए यहाँ तक पहुँचे थे।

बाबा ने खुशी जाहिर की, सौदागर ने गुस्ताखी के लिए माफी माँगी, उसकी पत्नी ने शरमाते हुए उसके चरण स्पर्श किए। नये राजा ने अपने अभिभाषण में मात्र इतना ही कहा, 'यदि दो-तीन विद्याओं को सीखने से एक गँवार भी सम्राट हो सकता है। काश, मैं और विद्याएँ सीख पाता!'